कृष्ण सूर्य सम, माया है अंधकार। जहाँ कृष्ण वहाँ नहीं माया का अधिकार।।

मूल्य १५ रु.

भगवद्दर्शन

हरे कृष्ण आन्दोलन की पत्रिका

फरवरी २०१०

गाँव गाँव में

विषय-सूची

वर्ष २३ अंक २ फरवरी २०१०

२ श्रील प्रभुपाद प्रवचन

ज्ञान किससे प्राप्त करें

ज्ञान केवल वही व्यक्ति प्रदान कर सकता है जिससे ऐसा करने का अधिकार प्राप्त है।

६

डिप्रैशन

जब हताशा हम पर हावी हो जाये तो हमें अर्जुन के समान श्रीकृष्ण का आश्रय लेना चाहिए।

१० अनुभूति

बारहवाँ खिलाड़ी

मत सोचो की पीछे रहकर सेवा करने से भगवान् आपको नहीं देख पायेंगे

१२ हरे कृष्ण लोग

गाँव गाँव में

शहरी जीवन की तकनीकों का आदी एक भक्त गाँवों में भक्ति के प्रचार की चुनौती स्वीकार करता है।

१७ भक्ति-अभ्यास

भक्ति - जीवन का सर्वोच्च लक्ष्य

भक्ति में ऐसे क्या गुण हैं जो उसे परम शुद्ध, प्रभावशाली एवं आकर्षक बना देते हैं?

२०

तीर्थों में तीर्थ - श्रीनवद्वीप

जिस प्रकार श्रीचैतन्य महाप्रभु अवतार शिरोमणि हैं, उसी प्रकार उनका धाम भी तीर्थों में तीर्थ है।

२४

हरिनाम की लीलायें

एक भक्त सर्वाधिक अनपेक्षित क्षणों में प्रत्यक्ष हरिनाम के प्रभाव को देखता है।

श्रील प्रभुपाद वाणी शिक्षा कुत्तों के लिए नहीं	२२
दिनदर्शिका	५
इस्कॉन जगत्	२७
श्रीभगवान् ने कहा	२८
केन्द्र सूची	३१
सम्पादकीय बँटवारा	३२

भगवद्दर्शन हरे कृष्ण आन्दोलन की अंग्रेजी पत्रिका **(Back to Godhead)** का अधिकृत हिन्दी संस्करण है, जिसकी शुरुआत श्री श्रीमद् ए.सी. भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद ने सन् १९४४ में अपने गुरु श्री श्रीमद् भक्तिसिद्धांत सरस्वतीमहाराज की आज्ञानुसार की थी।

'भगवद्दर्शन' अखिल मानवता कोआध्यात्मीकृत करने का सांस्कृतिक साधन है। इसके ध्येय इस प्रकार से हैं:

१. सत्य और भ्रम,जड़ और चेतन, नित्य और अनित्य का भेद लोगों को समझाना।
२. भौतिकतावाद के दोष लोगों को बताना।
३. वैदिक संस्कृति के अनुसार आध्यात्मिक जीवन का प्रशिक्षण देना।
४. वैदिक संस्कृति की रक्षा और प्रचार करना।
५. भगवान् श्रीचैतन्य महाप्रभु के उपदेश के अनुसार भगवान् के दिव्य नाम का संकीर्तन करना।
६. पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् श्रीकृष्ण का स्मरण करने और उनकी सेवा करने के लिए सारे जीवों की नम्र भाव से मदद करना।

बी.बी.टी. के समन्वयक एवं ट्रस्टी : श्रीमद् गोपालकृष्ण गोस्वामी महाराज, श्रीमद् जयाद्वैत स्वामी महाराज • संपादक : महाप्रभु दास (आर.के. माहेश्वरी) • उपसंपादक : वंशी विहारी दास • सहायक : व्रजवासी दास, भक्त श्रीधर, गौरकीर्तन दास • व्यवस्थापक : सच्चिदानंद दास • कला निर्माता : सुंदररूप दास • वित्तीय प्रबंधन : सहदेव दास (एस.पी.माहेश्वरी), मंजरी देवी दासी • प्रसार व्यवस्थापक : पाण्डुरंग दास

©२०१०भक्तिवेदान्त बुक ट्रस्ट, मुद्रित एवं प्रकाशितः उज्ज्वल जाजू द्वारा **भक्तिवेदान्त बुक ट्रस्ट।** ; प्रकाशन स्थानः **३३, जानकी कुटीर, जुहू, मुम्बई-४९;** मुद्रणः **मैग्रा ग्राफिक्स लि.** १०१ सी ॲन्ड डी, गव्हर्नमैन्ट इन्डस्ट्रीयल इस्टेट, कांदीवली (पश्चिम) मुंबई - ४०००६७. सम्पादकः **आर.के.महेश्वरी, ४, मुरलीमहल, खार (प.), मुम्बई-५२**

'भगवद्दर्शन' पत्रिका साल में बारह बार प्रकाशित की जाती है। सदस्यता शुल्क- वार्षिक : १५० रुपए , द्विवार्षिक :३०० रुपए , पंचवार्षिक : ७०० रुपए। आप किसी भी महीने से सदस्य बन सकते हैं। मनीआर्डर *'भगवद्दर्शन'* के नाम से भेजा जाए। शुरू में भेजते समय या संपादक के साथ पत्र-व्यवहार करते समय अपना पूरा नाम और पता पिनकोड के साथ साफ अक्षरों में लिखें। अगर पते में परिवर्तन हो तो तुरंत सूचना दें। चेक से रकम भेजनी हो तो मुंबई के बाहर के चेक के लिये १० रु. अधिक भेजें। चेक *'भगवद्दर्शन'* के नाम से भेजें।

संपादकीय कार्यालय : *'भगवद्दर्शन'*, ३०२, अमृत इंडस्ट्रियल एस्टेट, ३री मंजिल, पश्चिम एक्सप्रेस हाइवे मीरा रोड (पूर्व), ४०११०४
दूरभाषः-३२५५६७०१ पत्र व्यवहार के लिए पाठक btghindi@pamho.net पर भी लिख सकते हैं।

हरे कृष्ण संस्था के भक्तों के नाम भगवान् या भगवद्भक्तों के नाम के बाद 'दास'(पुरुषों के लिए) या 'देवी दासी'(स्त्रियों के लिए) जोड़ कर दिये जाते हैं। उदाहरण के लिए-कृष्णदास, मध्वाचार्य दास या यमुना देवी दासी इत्यादि।

ज्ञान किससे प्राप्त करें

भगवान् श्रीकृष्ण को केवल उसी व्यक्ति के माध्यम से समझा जा सकता है, जो स्वयं भगवान् द्वारा अधिकृत है।

श्रीप्रह्लाद उवाच
कौमारं आचरेत्प्राज्ञो धर्मान्भागवतानिह।
दुर्लभं मानुषं जन्म तदप्यध्रुवमर्थदम्।।

प्रह्लाद महाराज कहते हैं, "जो व्यक्ति बुद्धिमान् है वह अन्य सभी कार्यों को त्यागकर बचपन से ही मनुष्य जीवन का उपयोग भक्तिमय कार्यों को करने में करता है। मनुष्य जीवन अत्यन्त दुर्लभ है और यद्यपि अन्य शरीरों की भाँति यह भी क्षणभंगुर है फिर भी यह उपयोगी है क्योंकि इस मानव जीवन में हम भक्ति कर सकते हैं। यहाँ तककि गम्भीर रूप से की गई अल्पभक्ति भी पूर्णता प्रदान कर सकती है।"

(श्रीमद्भागवतम् ७.६.१)

आज हम उस दृष्टिकोण से कृष्णभावना के महत्त्व पर चर्चा करेंगे, जिस दृष्टिकोण से गुरु-शिष्य परम्परा में महान् आचार्यों ने इसका वर्णन किया है। आपको ज्ञात होगा की हम न तो मनोधर्म के अनुसार कार्य करते हैं और न ही ऐसे कार्यों को स्वीकारते हैं। हम अधिकारियों से ज्ञान प्राप्त करते हैं और ऐसे ही अनेकानेक आचार्यों में से एक हैं प्रह्लाद महाराज। प्रह्लाद महाराज परम्परा में आये एक महान् भक्त हैं। उन्हें महान् आचार्य या अधिकारी या महाजन माना जाता है। आचार्य कौन है? आचार्य वह है जो वैदिक ज्ञान की जटिलताओं को जानता है, उस ज्ञान के आधार पर कार्य करता है और अपने शिष्यों को वह ज्ञान देता है। आचार्य शब्द का अर्थ उस व्यक्ति से है जिसके व्यवहार का हमें अनुकरण करना चाहिए। ऐसा आचार्य प्रामाणिक परम्परा में होता है। हम अपनी रुचि अनुसार किसी का भी अनुकरण नहीं कर सकते।

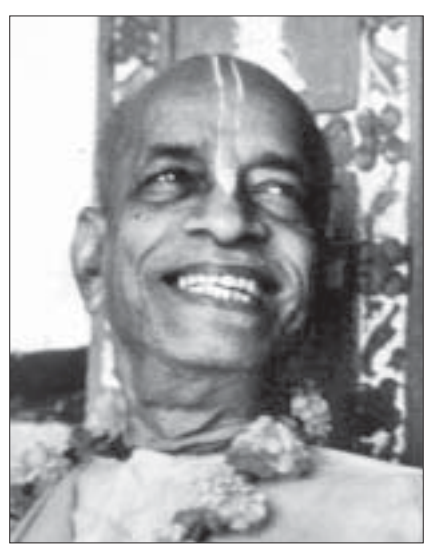

बारह महाजन

हम प्रह्लाद महाराज की शिक्षाओं पर चर्चा कर रहे हैं क्योंकि वे महान् आचार्यों में से एक हैं। श्रीमद्भागवतम् में ऐसे अनेक प्रामाणिक आचार्यों का वर्णन है। कौन हैं वे? *स्वयम्भूर्नारदः शम्भूः...* (श्रीमद्भागवतम् ६.३.२०)। *स्वयम्भूः* अर्थात् ब्रह्माजी। ब्रह्माजी का जन्म बिना किसी भौतिक माता-पिता की सहायता से हुआ। इसलिए उन्हें स्वयंभू अर्थात् 'जिनका जन्म स्वयं हुआ हो' कहा जाता है। इस ब्रह्माण्ड में वे एकमात्र जीव हैं जिनका जन्म बिना किसी भौतिक माता-पिता की सहायता से हुआ। किन्तु उनके पिता हैं; स्वयं भगवान् नारायण उनके पिता हैं। भगवान् नारायण की नाभि से प्रकट हुए कमलपुष्प पर ब्रह्माजी का जन्म हुआ। इसलिए उन्हें स्वयंभू कहा जाता है। उनसे पूर्व सृष्टि का कोई अस्तित्व नहीं था।

उसके पश्चात् हैं श्रील नारदमुनि। नारदमुनि ब्रह्माजी के पुत्र हैं। फिर हैं शम्भु, वे भी ब्रह्माजी के पुत्र हैं। शम्भु अर्थात् शिवजी। वे भी एक आचार्य हैं।

उसके पश्चात् हैं चार कुमार और वे भी ब्रह्माजी के पुत्र हैं। कुमार अर्थात् ब्रह्मचारी। जब उनका जन्म हुआ तो ब्रह्माजी इस ब्रह्माण्ड को जीवों से भरने के लिए अनेक पुत्र और पौत्र चाहते थे जिससे वे सृष्टि को बढ़ा सकें। तो ब्रह्माजी ने अपने चार कुमारों से निवेदन किया, ''प्रिय पुत्रों, विवाह करो और जनसंख्या बढ़ाओ।'' किन्तु कुमारों ने कहा, ''पिताजी, हमारी विवाह करने में कोई रुचि नहीं है। हम इस भौतिक बंधन में बँधना नहीं चाहते। हम ब्रह्मचारी रहकर ही कृष्णभावना का पालन करेंगे।''

यह सुनकर उनके पिताजी अत्यन्त क्रुद्ध हो उठेह्न ''ओह, तुम मेरी आज्ञा का उल्लंघन कर रहे हो?''

उस समय उनके क्रोध से शिवजी का जन्म हुआ। शिवजी का एक नाम रुद्र भी है क्योंकि वे अपने जन्म के समय से ही रोदन (रोना) कर रहे थे। और वे भी एक महाजन हैं। भगवान् कपिल भी महाजन हैं। वे देवहूति के पुत्र थे और उन्हें भगवान् का एक अवतार माना जाता है। उनके पश्चात् हैं मनु, जो मानव जाति के जनक हैं। मनु शब्द से ही 'मानव' शब्द की उत्पत्ति हुई है।

फिर प्रह्लाद महाराज का नाम आता है। फिर जनक महाराज का, जिनके यहाँ भगवान् रामचंद्र की पत्नी सीतादेवी का जन्म हुआ था। इसलिए सीतादेवी का एक अन्य नाम जानकी भी है। जानकी अर्थात् 'जनक की पुत्री।' तो वे भी एक महाजन हैं।

उसके पश्चात् भीष्मदेव हैं। आपने भीष्मदेव के विषय में सुना ही होगा। वे अर्जुन के प्रपितामह थे और वे भी एक महाजन हैं।

फिर महाराज बलि हैं। वे प्रह्लाद महाराज के पौत्र थे। ये सभी व्यक्ति अपनी कृष्णभावना में प्रगति के उदाहरणीय आचरण द्वारा महाजन बने। इसलिए इन्हें अधिकारी माना जाता है।

उनके पश्चात् *वैयासकिः* अर्थात् 'व्यासदेव के पुत्र' या श्रील शुकदेव गोस्वामी हैं। वे भी एक महाजन हैं। और यह श्लोक *वयम्* शब्द से समाप्त होता है। *वयम्* अर्थात् 'हम' या यमराज, क्योंकि यह श्लोक यमराज बोल रहे हैं। यमराज पापियों को दण्ड देते हैं। वे पुलिस के समान हैं, जिन्हें श्रीकृष्ण ने नियुक्त किया है। वे भी एक महाजन हैं। आप पुलिस कमीश्नर को अधिकारी के रूप में नकार नहीं सकते। जिस प्रकार राज्य में पुलिस कमीश्नर अधिकारी होता है उसी प्रकार यमराज भी एक अधिकारी हैं।

एक नास्तिक का आस्तिक पुत्र

आज हम ऐसे ही एक महाजन प्रह्लाद महाराज की शिक्षाओं पर चर्चा कर रहे हैं। प्रह्लाद महाराज का क्या इतिहास है? उनका जन्म एक महान् असुर के घर में हुआ। उनके पिता थे हिरण्यकशिपु। *हिरण्य* अर्थात् सोना और *कशिपु* अर्थात् कोमल बिस्तर पर भोग करना। तो हिरण्यकशिपु दो कार्यों में संलग्न था, धन और इंद्रियतृप्ति। यही उसका कार्य था और वह अपने पुत्र को भी इन्हीं कार्यों में प्रशिक्षित करना चाहता था। किन्तु सौभाग्य से नारदमुनि के उपदेश के कारण वह बालक महान् संत बन गया। उसका जन्म महान् असुर पिता के घर में हुआ था। किन्तु महान् भक्त नारदमुनि के आशीर्वाद के कारण वह भी महान् भक्त बन गया।

फिर प्रह्लाद महाराज कृष्णभावना का प्रचार करने लगे। कहाँ? अपने विद्यालय में। वे पाँच वर्ष के बालक थे और जैसे ही उन्हें अवसर प्राप्त हुआ वे अपने सहपाठियों को कृष्णभावना का प्रचार करने लगे। यही उनका कार्य था।

प्रह्लाद महाराज के पिता ने अनेक बार उनके शिक्षकों को बुलायाह्न ''मेरे पुत्र को तुम क्या शिक्षा दे रहे हो? यह हरे कृष्ण का कीर्तन क्यों कर रहा है? (हँसी) क्यों तुम मेरे पुत्र को बिगाड़ रहे हो?'' (हँसी)

आपने देखा? तो ऐसा मत सोचो कि मैं हरे कृष्ण के विषय में सिखाकर इन युवक-युवतियों को बिगाड़ रहा हूँ।

एक शिक्षक ने उत्तर दिया, ''महाराज, मैं आपके पुत्र को राजनीति एवं अर्थशास्त्र जैसे विषयों का अच्छा ज्ञान दे रहा हूँ और जैसाकि आप चाहते हैं कि वह इस संसार में अत्यन्त चतुर बने, मैं इसे वही शिक्षा दे रहा हूँ। किन्तु दुर्भाग्य से मुझे मालूम नहीं कि कहाँ से आपके पुत्र ने हरे कृष्ण बोलना सीखा। तो कृपया मुझे क्षमा कर दीजिए। मैं भरसक प्रयास कर रहा हूँ कि यह हरे कृष्ण को भूल जाये किन्तु मुझे समझ नहीं आ रहा कि कैसे यह स्वभाविक रूप से ही हरे कृष्ण बोलता है। और यह न केवल स्वयं बिगड़ रहा है अपितु यह पूरे विद्यालय को बिगाड़ रहा है। (हँसी) क्योंकि जैसे ही यह हरे कृष्ण का कीर्तन करता है सभी बच्चे खड़े होकर इसके साथ-साथ ही नाचने और ताली बजाने लगते हैं। यह सब चल रहा है।''

जिस प्रकार राज्य में पुलिस कमीश्नर अधिकारी होता है उसी प्रकार यमराज भी एक अधिकारी हैं।

गौड़ीय वैष्णव परम्परा

तो यहाँ रखा श्रीमद्भागवतम् का यह संस्करण अत्यन्त विशाल एवं विशेष है। इसमें प्रत्येक श्लोक पर महान् भक्तों द्वारा आठ टीकायें दी गई हैं। ये आचार्य भिन्न-भिन्न परम्पराओं का प्रतिनिधित्व करते हैं। चार प्रामाणिक परम्परायें हैं। मैंने आपको पहले ही बताया है कि ब्रह्माजी एक महाजन हैं। उनसे भी एक परम्परा आरम्भ होती है - ब्रह्माजी से नारद, नारद से व्यासदेव, व्यासदेव से मध्वाचार्य। उसके बाद अनेक आचार्य आये किन्तु मैं संक्षेप में कहूँगा - मध्वाचार्य से माधवेन्द्रपुरी, माधवेन्द्रपुरी से ईश्वरपुरी, ईश्वरपुरी से श्रीचैतन्य महाप्रभु, श्रीचैतन्य महाप्रभु से स्वरूप दामोदर, स्वरूप दामोदर से छह गोस्वामी, छह गोस्वामी से कृष्णदास कविराज गोस्वामी (श्रीचैतन्य

चरितामृत के रचयिता), उनसे नरोत्तमदास ठाकुर, नरोत्तमदास ठाकुर से विश्वनाथ चक्रवर्ती, विश्वनाथ चक्रवर्ती से जगन्नाथदास बाबाजी, जगन्नाथदास बाबाजी से भक्तिविनोद ठाकुर, भक्तिविनोद ठाकुर से गौरकिशोर दास बाबाजी और गौरकिशोर दास बाबाजी से मेरे गुरु महाराज। और उनके पश्चात् हम हैं।

इस प्रकार यह परम्परा आ रही है। गुरु-शिष्य परम्परा का क्या महत्व है? यदि आप इन अधिकारियों की परम्परा में आये भक्तों से ज्ञान प्राप्त करते हैं तो आपका ज्ञान पूर्ण होगा। पूर्ण ज्ञान पूर्ण व्यक्ति अर्थात् भगवान् द्वारा ब्रह्माजी को दिया गया। और उन्होंने वही ज्ञान नारदमुनि को दिया। नारदमुनि ने वह ज्ञान व्यासदेव को दिया, व्यासदेव ने वह ज्ञान मध्वाचार्य को दिया और इस प्रकार यह आगे बढ़ा। यदि वृक्ष से कोई पका हुआ फल अचानक गिर जाता है तो वह नष्ट हो जायेगा। किन्तु यदि वह फल विभिन्न व्यक्तियों के हाथों से होता हुआ ऊपर से नीचे आता है तो वह यथारूप में आपको प्राप्त होगा और आप उस फल का रसास्वादन कर सकते हो। उसी प्रकार जब परम्परा के माध्यम से ज्ञान प्राप्त होता है तो आप उस वास्तविक ज्ञान का आस्वादन कर सकते हो।

हम अपने दिमाग से ज्ञान का निर्माण नहीं करते। हम परम भगवान् से आने वाले ज्ञान को स्वीकार करते हैं। वह ज्ञान पूर्ण है।

भगवद्गीता में इसकी पुष्टि की गई है। चौथे अध्याय में श्रीकृष्ण कहते हैं, *इमं विवस्वते योगं प्रोक्तावानहमव्ययम्* (भ.गी.४.१)। ''सबसे पहले मैंने विवस्वान् को यह ज्ञान प्रदान किया।'' सूर्यदेवता का नाम विवस्वान् है। जिस प्रकार हमारे अनेक प्रधान होते हैं उसी प्रकार प्रत्येक लोक के अधिष्ठाता देव हैं। वेदों में उन्हें चंद्रदेव या सूर्यदेव या वरुण इत्यादि के नाम से जाना जाता है। यदि आप योग्य हो तो आप भी इन पदों को प्राप्त कर सकते हैं। जिस प्रकार आप प्रधानमंत्री बन सकते हैं उसी प्रकार आप सूर्य, चंद्रमा या अन्य लोकों के देवता बन सकते हो। भगवद्गीता (७.२३) में इसकी पुष्टि की गई है, *देवान् यान्तिदेवव्रता।* जो भी देवलोक में जाना चाहता है वह वहाँ जा सकता है।

तो श्रीकृष्ण कहते हैं, ''सबसे पहले मैंने विवस्वान् को यह ज्ञान प्रदान किया।'' विवस्वान् सूर्य के अधिष्ठाता देव हैं। उन्हें भगवद्गीता का ज्ञान प्रदान किया गया। और श्रीकृष्ण कहते हैं, *विवस्वान् मन्वे प्राह* ''और महाराज विवस्वान् ने भगवद्गीता का यह ज्ञान मनु को प्रदान किया।'' मैंने पहले ही मनु के विषय में बताया है। मनु अर्थात् मानवों के जनक। इसका अर्थ हुआ कि सूर्यदेव ने यह ज्ञान मनु को दिया और मनु ने इसे अपने पुत्र इक्ष्वाकु को दिया।

इक्ष्वाकु महान् राजा हैं। वे उस सूर्यवंश के पहले राजा थे, जिसमें भगवान् रामचंद्र प्रकट हुए थे। दो प्रकार के क्षत्रिय होते हैंह्न सूर्यवंशी और चंद्रवंशी।

अगले श्लोक में श्रीकृष्ण कहते हैं, *एवं परम्परा प्राप्तमिमं राजर्षयो विदुः* (भ.गी.४.२)। इस प्रकार राजर्षियों की परम्परा द्वारा यह ज्ञान प्राप्त किया गया। राजर्षि अर्थात् 'ऋषि के समान राजा'। महाभारत में दिये गये इतिहास में ऐसे अनेक राजा हैं जो ऋषियों के ही समान थे। वे केवल नाम के लिए राजा थे किन्तु वे सदैव अपनी प्रजा के कल्याण के विषय में सोचते थे। महाराज युधिष्ठिर ऐसे ही एक राजा थे।

तब श्रीकृष्ण कहते हैं, *....योगो नष्ट परन्तप* (भ.गी.४.२)ह्न ''किन्तु काल के प्रभाव से यह परम्परा नष्ट हो गई।'' जरा कल्पना कीजिए। क्योंकि यह ज्ञान सूर्यदेवता से आ रहा था तो इसके नष्ट होने की पूरी सम्भावना थी। मान लीजिए, मैं आपको कोई ज्ञान दूँ और आप परम्परा में उसे किसी दूसरे व्यक्ति को दो। तो इसकी पूरा सम्भावना है कि मेरे द्वारा दिये गये मूल ज्ञान के उस स्थानांतरण में कुछ त्रुटियाँ आ जायें। इसे परम्परा का नष्ट होना कहते हैं। श्रीकृष्ण कहते हैं, ''काल के प्रभाव से वह परम्परा टूट गई इसलिए तुम्हारे माध्यम से मैं उसे पुनर्स्थापित करने के लिए आया हूँ।''

परम्परा को समझने का यही मार्ग है। यद्यपि हम अर्जुन के समान श्रीकृष्ण के समक्ष नहीं होंगे किन्तु यदि हम परम्परा में प्राप्त हुए ज्ञान को उसी प्रकार स्वीकार करें जिस प्रकार अर्जुन ने स्वीकार किया था तो हम श्रीकृष्ण से ही प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करेंगे। यह विधि है। किन्तु यदि मैं अपने मनोकल्पित ढंग से इस ज्ञान की व्याख्या दूँ तो परम्परा टूट जायेगी।

मैंने श्रीचैतन्य महाप्रभु से अब तक की अपनी परम्परा का वर्णन किया है। हम अपनी बुद्धि से ज्ञान का निर्माण नहीं करते। हम परम भगवान् से आने वाले ज्ञान को स्वीकार करते हैं। वह ज्ञान पूर्ण है। उदाहरणार्थ, हम अपने माता-पिता से ज्ञान प्राप्त करते हैं - ''यह लैम्प है, यह मेज है, इसे पुस्तक कहते हैं।'' यदि आप विरोध करो, ''मैं इसे पुस्तक ही क्यों कहूँ? मैं इसे कुछ और कहूँगा''- आप ऐसा कर सकते हैं, किन्तु वह वास्तविक ज्ञान से भटकना होगा।

परम्परा विधि को ज्ञान प्राप्त करने की पूर्ण विधि माना जाता है। मैं अपूर्ण हो सकता हूँ और मेरे शिष्य भी अपूर्ण हो सकते हैं किन्तु यदि हम परम्परा में आने वाले ज्ञान के अनुसार ही कार्य करें तो हम पूर्ण हैं।

यह इतना सरल एवं श्रेष्ठ है। माता-पिता बच्चे को सिखाते हैं, ''इसे घड़ी या अलार्म कहते हैं।'' यदि बच्चा इसे स्वीकारता है तो उसे आगे खोज करने की आवश्यकता नहीं हैह्न ''इसे अलार्म क्यों कहा जाता है?'' यह अत्यन्त सरल विधि है। ''मेरे पिताजी ने कहा है कि यह अलार्म है तो मैं इसे अलार्म के रूप में ही स्वीकार कर लेता हूँ,'' और इससे प्रत्येक व्यक्ति समझ जायेगा कि यह अलार्म है। किन्तु अपने दिमाग से यदि मैं इसके लिए और कोई

नाम निकालता हूँह्व ''ये यह है''ह्व तो लोग मुझे पागल कहेंगे। ''तुम यह क्या कह रहे हो?'' तो परम्परा विधि अत्यन्त उत्कृष्ट है।

इस उक्ति को लीजिए 'सभी की मृत्यु निश्चित् है।' आपने अपने माता-पिता या शिक्षकों से जाना है कि सभी की मृत्यु निश्चित् है। तो यदि आप इसकी खोज करना चाहो कि क्या प्रत्येक व्यक्ति की मृत्यु निश्चित् है या नहीं तो आपको बहुत समय लगेगा। किन्तु यदि आप केवल अपने बड़ों की बात मान लेते हैं कि 'सभी की मृत्यु निश्चित् है', तो आपका ज्ञान पूर्ण है।

इस परम्परा विधि का ज्ञान वेदों में दिया गया है और महान् आचार्यों ने इस विधि का पालन किया है। प्रह्लाद महाराज ऐसे ही आचार्यों में से एक हैं।

प्रह्लाद महाराज की सलाह

प्रह्लाद महाराज अपने सहपाठियों को जो सिखा कर रहे हैं आप उसे स्वीकार करने का प्रयास करें। वे क्या सलाह दे रहे हैं? *कौमारं आचरेत्प्राज्ञो धर्मान्भागवतानिह* (श्रीमद्भागवतम् ७.६.१)ह्व ''मेरे प्रिय मित्रों, बचपन से ही कृष्णभावना का पालन करना चाहिए।'' बचपन से ही क्यों? क्योंकि यदि कोई बुद्धिमान् होगा तो वह समझ जायेगा, ''यह निश्चित् नहीं कि मैं वृद्ध होऊँगा ही, कभी भी मेरी मृत्यु हो सकती है।''

सामान्य रूप से हम सोचते हैं कि हम वृद्ध होकर ही मरेंगे। किन्तु कौन कह सकता है कि मैं इतना वृद्ध नहीं हूँ कि अगले क्षण मेरी मृत्यु नहीं होगी? यदि मुझे कोई अप्राकृतिक वस्तु प्राप्त करनी है जो जीवन में मुझे सर्वोच्च लाभ दे सकती है तो मैं वृद्धावस्था की प्रतीक्षा क्यों करूँ? मुझे तुरन्त आरम्भ करना चाहिए। यदि कृष्णभावना इतनी सर्वश्रेष्ठ है, तो यदि यह मुझे जीवन की सर्वोच्च पूर्णता प्रदान कर सकती है, और यदि मैं बुद्धिमान् हूँ तो मुझे बिना देर किये तुरन्त इसे स्वीकारना चाहिए। किन्तु सामान्य रूप से लोग सोचते हैं कि बचपन या युवावस्था में हमें भोग करना चाहिए।

एक श्लोक में शंकराचार्य उन बच्चों, युवाओं और वृद्धों पर शोक करते हैं जो भौतिक रूप से सुखी जीवन जी रहे हैं। शंकराचार्य या ईसामसीह जैसे अध्यात्मवादी अप्रसन्न हैं, ''ओह, ये लोग कैसे मूर्खताभरे कार्य कर रहे हैं।'' आध्यात्मिक रूप से ज्ञानवान लोग इस प्रकार के निःस्वार्थी कार्य करते हैं। वे स्पष्ट रूप से देख सकते हैं कि किस प्रकार लोग अपने मूल्यवान जीवन को इंद्रियतृप्ति के लिए गँवा रहे हैं।

प्रह्लाद महाराज वही ज्ञान हमें दे रहे हैं। वे कहते हैं कि सभी को *धर्मान् भागवतान्* का बचपन से ही पालन करना चाहिए। धर्म अर्थात् 'हमारे कर्तव्य'। धर्म और श्रद्धा में अन्तर है। श्रद्धा को बदला जा सकता है किन्तु धर्म को नहीं। आपको धर्म का पालन करना ही होगा। तो हमारा धर्म क्या है? हमारे अनिवार्य कर्तव्य क्या हैं? मैंने अनेक बार इसका उल्लेख किया है। हमारा अनिवार्य कर्तव्य सेवा करना है। हम सभी सेवा कर रहे हैं और यहाँ उपस्थित सभी युवक-युवतियाँ इसे समझ सकते हैं। कोई भी नहीं कह सकता कि वह सेवा नहीं कर रहा। सभी सेवा कर रहे हैं। यह हमारा अनिवार्य कार्य है। मैं मुसलमान या ईसाई या हिन्दु बन सकता हूँ किन्तु मेरा वास्तविक कर्तव्य दूसरों की सेवा करना ही रहेगा। इसे बदला नहीं जा सकता। यह धर्म की वास्तविक शिक्षा है।

इसलिए वैदिक शास्त्रों मे 'सनातन धर्म' शब्द का वर्णन आता है, अर्थात् ऐसा कर्तव्य जो नित्य है। प्रह्लाद महाराज सलाह देते हैं, *धर्मान् भागवतान्।* भागवत अर्थात् 'भगवान् से सम्बन्धित'। भगवान् शब्द संज्ञा है और भागवत विशेषण। मूल शब्द भागवत है। *वत्* अर्थात् 'धारण करने वाला' और *भग* का अर्थ है ऐश्वर्य। तो जो व्यक्ति सभी ऐश्वर्यों को धारण करता है उसे भगवत् कहते हैं। और भगवत् से ही भागवत शब्द आया है।

तो भागवत अर्थात् 'भगवान् या उनके भक्तों से जुड़ा।' इस पुस्तक को भागवत इसलिए कहते हैं क्योंकि यह केवल भगवान् से जुड़े विषयों की चर्चा करती है, अन्य किसी की नहीं। और इस पुस्तक में आप भगवान् और उनके भक्तों के बीच हुए व्यवहारों का वर्णन प्राप्त करोगे। दो प्रकार के भागवत होते हैं - भक्त भागवत और पुस्तक भागवतम्। प्रह्लाद महाराज सलाह दे रहे हैं कि यदि कोई बुद्धिमान् है तो उसे चाहिए कि वह बचपन से ही भगवान् और भक्तों से सम्बन्धित कार्यों में संलग्न हो।

बहुत-बहुत धन्यवाद।

वैष्णव दिनदर्शिका

१ फरवरी से १० मार्च २०१० तक

फरवरी २०१०

बुधवार ३, श्रील पुरुषोत्तम दास ठाकुर तिरोभाव, श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर आविर्भाव (दोपहर तक उपवास), श्रील गौर गोविन्द स्वामी तिरोभाव।

बुधवार १०, पक्षवर्द्धिनी महाद्वादशी, विजया एकादशी, श्रील ईश्वर पुरी तिरोभाव।

गुरुवार ११, पारयण का समय ७:०२-१०:४४।

शुक्रवार १२, महाशिवरात्रि।

शनिवार १३, कुम्भ संक्रान्ति।

सोमवार १५, श्रील जगन्नाथदास बाबाजी तिरोभाव दिवस, श्री रसिकानंद प्रभु तिरोभाव।

गुरुवार १८, श्री पुरुषोत्तमदास ठाकुर आविर्भाव।

गुरुवार २५, आमलकी व्रत एकदशी।

शुक्रवार २६, पारायण का समय ६:४९-८:५६, श्रीमाधवेंद्र पुरी तिरोभाव।

रविवार २८, श्री गौरांग महाप्रभु आविर्भाव दिन (गौर पूर्णिमा), चंद्रोदय तक उपवास।

मार्च २०१०

सोमवार १, जगन्नाथ मिश्र महोत्सव।

सोमवार ८, श्रीवास ठाकुर आविर्भाव दिवस।

डिप्रैशन

''नियमित रूप से माला पर जप करने से मैं कुछ ही दिनों में डिप्रैशन से मुक्त होने लगी। उस अंधेरे कमरे में प्रकाश आने लगा जिसमें मैं रहने की आदी हो चुकी थी।''

– अर्चनसिद्धि देवी दासी

यह १४ नवम्बर १९७५ की बात है। शाम के समय मैं अपने कॉलेज के कमरे में बैठी थी कि अचानक एक फोन आया। परीक्षा की तैयारी में लीन होने के कारण मैंने बेफिक्री से फोन उठाया, मुझे लगा कि वह मेरी एक मित्र का होगा जो अकसर उसी समय मुझे फोन करती थी। किन्तु नहीं, उसके स्थान मुझे एक अनजान आवाज सुनाई पड़ी। उस युवक ने बताया कि वह मेरे भाई का पड़ोसी है।

मैंने सोचा, ''अरे, फिलिप ने अब क्या कर दिया?''

पिछले छह वर्षों से फिलिप को मानसिक विकार अथवा डिप्रैशन का रोग था। कई बार वह स्वेच्छा से ही अपनी दवाइयों को बन्द कर देता जिससे उसके दौरे और बढ़ जाते। अंतिम बार जब ऐसा हुआ था तो वह सड़क पर लेटा हुआ मिला, यह देखने का प्रयास करते हुए कि क्या उसे सड़क पर लेटे देखकर कारें रुकेंगी या नहीं। ऐसी अनेक घटनाओं के पश्चात् उसे पुनः मनोचिकित्सीय अस्पताल में भर्ती करवाया गया और दवाइयों द्वारा उसके स्वास्थ्य में थोड़ा सुधार हुआ।

जिस शाम वह फोन आया उससे एक दिन पहले ही मैं अपने भाई से मिली थी। वह शान्त और विचारों में खोया था। यद्यपि वह कॉलेज में अपनी कक्षाओं में जाता और पढ़ाई में अच्छा था, वह अकसर कहता कि उसे भविष्य में कोई आशा नहीं दिखाई देती। सबकुछ व्यर्थ दिखाई देता। मैंने उसे समझाया कि सबकुछ ठीक हो जायेगा बशर्ते वह हिम्मत करके इस तूफान का सामना करे। किन्तु उसकी नकारात्मक मानसिकता के समक्ष शायद ही मेरे शब्दों का कुछ प्रभाव पड़ा होगा।

कई बार मैं भी हताशा की भावना के साथ संघर्ष करती हूँ। मैंने अपनी आध्यात्मिक खोज अभी आरम्भ ही की थी किन्तु मेरे पास उसके इस प्रश्न का कोई उत्तर नहीं था कि जीवित क्यों रहा जाये। फिर भी उसने मुझे आश्वासन दिया कि वह ठीक हो जायेगा और उससे बातें करने के लिए मुझे धन्यवाद दिया।

फोन पर लम्बी चुप्पी के बाद पड़ोसी चीख पड़ा कि फिलिप ने छत से लटककर आत्महत्या कर ली है। उसका मृत शरीर अभी-अभी मिला। फोन करने वाले व्यक्ति ने सहानुभूति के कुछ शब्दों के साथ फोन रख दिया। मैं स्तब्ध और निर्जीव बैठी रही।

गहरी खोज

मेरे भाई की त्रासद मृत्यु ने मेरी आध्यात्मिक खोज को और गहरा दिया। अपने प्रश्नों के उत्तर के लिए मैं धार्मिक पुस्तकों और ग्रन्थों को छानने लगी। मार्गदर्शन के लिए उत्सुकता से प्रार्थना करने लगी।

शीघ्र ही मुझे हरे कृष्ण भक्तों से मिलने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। उनके विचार मुझसे मिलते थे कि कुछ समय में वृद्ध होकर मर जाना, इस प्रकार का जीवन निरर्थक है। किन्तु मुझसे विपरीत वे अत्यन्त उल्लसित और प्रसन्न थे। प्रतीत होते इस विरोधाभास के कारण उनकी धारणाओं एवं विचारों को जानने की मेरी जिज्ञासा और अधिक बढ़ गई।

मुझे पता चला कि भक्त वास्तविकता को एक अलग दृष्टिकोण से देखते हैं। उन्होंने मुझे बताया कि इस जन्म-मृत्यु के संसार से परे एक शाश्वत संसार है, जहाँ परम भगवान् श्रीकृष्ण के साथ सम्बन्ध में व्यक्ति प्रतिक्षण सर्वोच्च आनन्द प्राप्त करता है।

ईसाई धर्म की शिक्षाओं का अध्ययन करने के कारण मैं 'उस' संसार के विषय में जानती थी – कि अच्छा जीवन जीओ और मृत्यु के बाद आपको निश्चित् ही वहाँ स्थान प्राप्त होगा। किन्तु कृष्णभावना की शिक्षाओं में मुझे सर्वाधिक आकर्षक यह लगा कि उस शाश्वत संसार में जाने के लिए आपको मरने तक प्रतीक्षा करने की आवश्यकता नहीं है, इसी जीवन में आप आध्यात्मिक चेतना प्राप्त कर सकते हैं।

इसने दो प्रकार से मुझे लाभान्वित किया। पहला, इसने मुझे एक ऐसा उद्देश्य दिया जिसे प्राप्त करने के लिए जीवित रहना घाटे का सौदा नहीं था। दूसरा, मैं प्रतिदिन देख सकती थी कि मैंने आज कितनी प्रगति की है, और इससे मुझे

अपने लक्ष्य की ओर बढ़ने के लिए प्रेरणा मिलती।

भक्तों ने मुझे हरे कृष्ण महामंत्र का जप करना सिखलाया। इस मंत्र में भगवान् श्रीकृष्ण ने ऐसी शक्ति भरी है जिससे वह हमारे हृदयों में व्याप्त द्वेष, लोभ और घृणा जैसे अनर्थों को नष्ट कर सकता है। मंत्र हमारी वास्तविक आध्यात्मिक चेतना को उजागर करने में हमारी सहायता करता है। बद्धावस्था में असंख्य इच्छाओं से आवृत हमारी कुंठित चेतना हमें भगवान् से अलग किये रखती है।

नियमित रूप से माला पर जप करने से कुछ ही दिनों में मैं डिप्रैशन से मुक्त होने लगी। उस अंधेरे कमरे में प्रकाश आने लगा जिसमें मैं रहने की आदी हो चुकी थी।

अर्जुन को डिप्रैशन से निकालकर आध्यात्मिक चेतना में स्थापित करने के लिए श्रीकृष्ण भगवद्गीता का कालातीत ज्ञान देते हैं।

मंत्र की ध्वनि ने इस दृष्टि को हटा दिया कि संसार शून्य और उद्देश्यविहीन है। शीघ्र ही मैं हरे कृष्ण महामंत्र की सोलह माला का जप करने लगी और पिछले चौंतीस वर्ष से आज भी कर रही हूँ। इसके अनेक सकारात्मक परिणाम हुए। सबसे बड़ा नाटकीय परिवर्तन हुआ मेरी मानसिकता में। जिस डिप्रैशन के साथ मैं इतने वर्षों से जी रही थी मैं उससे मुक्त होने लगी।

डिप्रैशन की परिभाषा

अधिकतर लोगों का मूड यदा-कदा खराब रहता है जिसे ठीक करने के लिए उन्हें अपनी आन्तरिक अथवा बाह्य परिस्थिति में बदलाव की आवश्यकता होती है। इसके लिए हमें अपना दृष्टिकोण अथवा किसी वस्तु के प्रति अपनी समझ को बदलना पड़ सकता है, या कोई दूसरी नौकरी अथवा रहने के लिए नया घर देखना पड़ सकता है।

कभी-कभार निराशा का अनुभव करना वैद्यकीय दृष्टि से डिप्रैशन नहीं कहलाता। वैद्यकीय दृष्टि से केवल तब डिप्रैशन सिद्ध होता है जब किसी व्यस्क में कम से कम दो सप्ताह तक प्रतिदिन गहरे डिप्रैशन के लक्षण देखे जायें और कम से कम दो वर्षों तक अधिकांश दिन हल्के डिप्रैशन के लक्षण हों।

मूल रूप से देखा जाये तो डिप्रैशन या हताशा श्रीकृष्ण के साथ जुड़ने की आत्मा की उत्कण्ठा है। अन्ततः इस संसार की वस्तुयें कभी भी हमारी इच्छाओं को सन्तुष्ट नहीं हो सकतीं।

पिछले महीने ही क्रिसमस था। इस दिन इसका उदाहरण देखा जा सकता है। ईसाई धर्म में बच्चे सुबह उठकर दौड़ते हुए 'क्रिसमस ट्री' के पास जाते हैं। उन्हें आशा होती है कि वहाँ उन्हें वे उपहार मिलेंगे जिसकी आस उन्होंने सालभर से लगा रखी थी। किन्तु चमकीले कागजों और रिब्बनों से सजे डिब्बों में अकसर उन्हें निराशा ही मिलती है।

कई दिनों से लगाई आशायें गुल हो जाती हैं। फिर भी आश्चर्यजनक रूप से अगले वर्ष भी हम यह विश्वास रखते हुए धोखा खा जाते हैं कि इस बार जगमगाते क्रिसमस ट्री में अवश्य सुख प्राप्त कर लेंगे।

यद्यपि हमने बार-बार केवल निराशा का ही सामना किया होता है, भगवान् की माया शक्ति से आच्छादित हम सोचते हैं कि हम इस संसार में सुखी रह सकते हैं। हमें इस प्रकार की विचारधारा की खामियों की शिक्षा देने के लिए कई बार श्रीकृष्ण अपने शुद्ध भक्तों को माया से ढक देते हैं जिससे वे हमारे समान व्यवहार कर सकें। ऐसे ही एक भक्त थे अर्जुन। युद्धभूमि में अपने सामने सम्बन्धियों, गुरुओं और मित्रों को देखकर वे कुछ समय के लिए डिप्रैशन में चले जाते हैं और अपनी आध्यात्मिक पहचान को भूलने लगते हैं। शारीरिक चेतना के मोह में गिरकर वे अपने क्षत्रिय के कर्तव्यों को नजरअंदाज कर जंगल में भाग जाना चाहते हैं। उस उलझनभरी एवं पीड़ादायक मनःस्थिति में अर्जुन श्रीकृष्ण से कहते हैं कि यह शोक उनकी इन्द्रियों को सुखा रहा है और उन्हें इसे दूर करने का कोई मार्ग नहीं दिख रहा है। उस समय उन्हें समझ आता है कि कोई भी भौतिक समाधान उन्हें राहत प्रदान नहीं कर सकता। वे आश्रय के लिए भगवान् की ओर मुड़ते हैं।

अर्जुन को डिप्रैशन से निकालकर आध्यात्मिक चेतना में स्थापित करने के लिए श्रीकृष्ण भगवद्गीता का कालातीत ज्ञान देते हैं। श्रीकृष्ण के साथ आत्मा सम्बन्धी चर्चा अर्जुन की मानसिक वेदना का उपचार करती है और भगवान् के निर्देशानुसार कार्य करने के लिए प्रेरित करती है।

भक्तों में डिप्रैशन

शायद हमें लगेगा कि एक गम्भीर भक्त को कभी कोई मानसिक अथवा भावनात्मक रोग नहीं हो सकता। किन्तु जिस प्रकार भगवान् अपने भक्त को शारीरिक रोग देकर उसे अपने निकट लाते हैं, वे उसी प्रकार मानसिक रोगों का प्रयोग भी इस उद्देश्य के लिए कर सकते हैं। अर्जुन के साथ श्रीकृष्ण के व्यवहार से यह देखा जा सकता है।

हमें भी वह उपचार प्राप्त हो सकता है जो अर्जुन को हुआ था। परम भगवान् श्रीकृष्ण हमारे हृदयों में विराजमान हैं। वे हमें अच्छी सलाह देकर कष्टों से मुक्त करना चाहते हैं। और वे एक गुरु को हमारे पास भेजते हैं जो इस अस्थायी जगत् में हमारी यात्रा में हमारी सहायता करते हैं।

भौतिक जगत् हमारा सच्चा घर नहीं है और आईने में हम अपना जो शरीर देखते हैं वह भी हम नहीं हैं। श्रीमद्भागवतम् बताती है कि इस संसार में केवल दो व्यक्ति ही प्रसन्न रह सकते हैं, पहला मूर्ख दूसरा शुद्ध भक्त। एक मूर्ख सच्चाई को नजरअंदाज कर ऐसे जीता है मानो कभी नहीं मरेगा। किन्तु एक शुद्ध भक्त अपने

आध्यात्मिक स्वरूप को जान जाता है और इसलिए वह क्षणभंगुर भौतिक शरीर से प्रभावित नहीं होता। शुद्ध भक्त श्रीकृष्ण के साथ आध्यात्मिक जगत् में रहते हैं, चाहे उनके शरीर पृथ्वी पर ही क्यों न रह रहे हों।

चूँकि अधिकतर लोग मूर्ख और शुद्ध भक्त के बीच में आते हैं इसमें आश्चर्य नहीं कि अधिकांश लोग यदा-कदा डिप्रैशन का अनुभव करते हैं। अमरीका में लगभग पच्चीस प्रतिशत लोग जीवन में कभी-न-कभी वैद्यकीय रूप से प्रमाणित डिप्रैशन के शिकार होते हैं।

डिप्रैशन उस स्थिति में लाभदायक हो सकता है यदि उसके कारण हम यह जिज्ञासा करने लगें कि दुःख होते ही क्यों हैं। हमारे हृदय में उपस्थित भगवान् हमें अपनी ओर आने के लिए प्रेरित करेंगे। यदि हम उनकी उपेक्षा करेंगे और राहत पाने के लिए इस संसार की वस्तुओं का आश्रय लेंगे अथवा अपनी भावनाओं एवं असुरक्षाओं को नशे में डुबाने का प्रयास करेंगे तो हम अपनी दुखद स्थिति को केवल आगे ही बढ़ायेंगे। हम अपने अन्तर्मन से आती विवेकभरी आवाज को सुनने के प्रति असंवेदनशील हो जायेंगे।

एक ओर यह सच है कि आध्यात्मिक साधना सभी प्रकार के डिप्रैशन की रामबाण औषधी है, किन्तु डिप्रैशन का रोग ही इस प्रकार का होता है कि वह साधक को वे कार्य करने से रोकता है जो इस दलदल से बाहर निकलने में उसकी सहायता कर सकते हैं। पीलियाग्रस्त व्यक्ति के उपचार के लिए मिश्री अत्युत्तम औषधी है, किन्तु रोगी को वह कड़वी लगती है। किन्तु यदि वह उसे खाता रहे तो पीलिया ठीक हो जायेगा और मिश्री फिर से मीठी लगने लगेगी। हमारी रोगावस्था में हरे कृष्ण मंत्र का जप - जो औषधी के समान है - कई बार कठिन लगता है, किन्तु जैसे-जैसे हमारी चेतना शुद्ध होती जायेगी वैसे-वैसे नामजप अधिकाधिक मधुर एवं आनन्ददायक बनता जायेगा।

तो हमें अन्यों को नामजप रूपी औषधी लेने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए। किन्तु साथ ही साथ स्मरण रखें कि शायद उन्हें वैद्यकीय सहायता की आवश्यकता भी हो सकती है। हमें स्वयं में, अपने किसी परिजन या मित्र में दिख रहे डिप्रैशन के लक्षणों को कभी नजरअंदाज नहीं करना चाहिए। उन लक्षणों में ये सब या कुछ हो सकते हैं, जैसे हीन भावना, चिड़चिड़ापन, शक्ति का अभाव, ऐसा विचार कि मैं तो बेकार हूँ, भूख न लगना अथवा बहुत अधिक खाना, बहुत अधिक सोना या बहुत कम सोना, आत्महत्या अथवा अन्यों की हत्या के विचार, उन कार्यों में रुचि न रहना जो एक समय बहुत अच्छे लगते थे और बहुत कम आशा होना कि वे ठीक हो पायेंगे।

यद्यपि डिप्रैशन मन की एक विशिष्ट स्थिति है, विज्ञान ने पता लगाया है कि वैद्यकीय रूप से प्रमाणित डिप्रैशन का कारण मस्तिष्क में रसायनिक असंतुलन है। अकसर बिना दवाइयों के डिप्रैशन का इलाज हो सकता है। उदाहरणार्थ यदि हम अपनी भावनाओं को बदल दें, और आध्यात्मिक साधना करने से यह सम्भव हो सकता है कि हम अपने मस्तिष्क की रसायनिक स्थिति को बदल सकते हैं। यदि यह गहराई से हमारे अन्दर बैठा है तो हमें अपने मूल रसायनिक सन्तुलन को पुनः प्राप्त करने के लिए दवाइयों की आवश्यकता पड़ सकती है। बिना इलाज के छोड़ने पर अथवा ठीक से इलाज न करवाने पर त्रासदीपूर्ण परिणाम हो सकता है, जैसाकि मेरे भाई के साथ हुआ।

काश! अपने भाई की मृत्यु से पहले दिन जब मैं उससे मिली थी तो केवल सान्त्वनाभरे शब्दों के अतिरिक्त उसे भगवान् के पवित्र नाम दे पाती। काश! उस समय मेरे पास भगवद्गीता का ज्ञान होता और मैंने उसे अमर आत्मा का ज्ञान दिया होता। काश! मुझे मालूम होता कि श्रीकृष्ण परम भगवान् हैं और वे हमारे परममित्र एवं परमहितैषी हैं। काश! आध्यात्मिक ज्ञान देकर मैंने उसे सान्त्वना दी होती।

इतना कुछ करने के बाद भी शायद उसे दवाइयाँ लेनी पड़ती। किन्तु मुझे लगता है कि कृष्णभक्ति करने से उसे जीवित रहने का एक उद्देश्य मिल जाता। मैं प्रार्थना करती हूँ कि वह जहाँ कहीं भी हो कृष्णभावना के सम्पर्क में आये और अपने सर्वोच्च आध्यात्मिक लक्ष्य की ओर अग्रसर हो।

अर्चनासिद्धि देवी दासी ने १९७६ में श्रील प्रभुपाद से दीक्षा ली। वे अपने पति के साथ न्यू ओरलींस, अमरीका में रहती हैं और एक पारिवारिक चिकित्सक का कार्य करती हैं।

बारहवाँ खिलाड़ी

चित्रकार जनार्दन सालकर

वह मैदान में प्रमुख खिलाड़ियों को पानी पिलाने आता है। आप सोचेंगे कि शायद वह इतना महत्वपूर्ण नहीं है। किन्तु भगवान् क्या सोचते हैं?...

–युगावतार दास

क्रिकेट। बचपन से ही मैं इसका बड़ा फैन था। किन्तु कृष्णभावना में आने के पश्चात् मुझे पता चला कि क्रिकेट खेलने से भी अच्छा एक विकल्प है – आध्यात्मिक जगत् में सदा-सदा के लिए भगवान् श्रीकृष्ण के साथ खेलना।

एक दिन एक पत्रिका पढ़ते समय मुझे १९८३ क्रिकेट विश्वकप में हुई भारत की विजय से सम्बन्धित कुछ चित्र दिखाई दिये। मेरी पुरानी यादें ताजा हो गईं। कैसे मैंने अपने पड़ोस में एक छोटे से श्याम-श्वेत टी.वी. के सामने खड़ी भीड़ के बीच दबकर झाँकते हुए एक-एक मैच देखा था। क्या उमंग थी। जिस प्रकार से देवतागण भगवान् श्रीकृष्ण की रासलीला पलकें झपके बिना देखते हैं, मैं घण्टों खड़े रहकर मैच के एक-एक पहलू को टकटकी लगाकर देखता था। जिस प्रकार एक शुद्ध भक्त निरन्तर भगवान् की लीलाओं का स्मरण करता है, मैं विश्वकप में हुए उत्तेजक एवं रोमांचक क्षणों का निरन्तर स्मरण करता। और आज इस समाचार पत्र को देखकर मेरा आकर्षण पुनः उभर आया उसी प्रकार जैसे एक शुद्ध भक्त सहजता से श्रीमद्भागवतम् की दिव्य लीलाओं के प्रति आकर्षित हो जाता है।

मैंने विश्वकप पकड़कर खड़ी विजेता टीम को देखा। वहाँ मुझे एक अपरिचित चेहरा दिखाई दिया। विजेता टीम के साथ वह इतने गर्व और विश्वास से खड़ा था मानो कप जितवाने में उसका बड़ा हाथ हो। बहुत विचार करने पर भी मुझे याद नहीं आया कि सभी मैचों में उसकी क्या भूमिका थी। अन्ततः मैंने पहचान लिया, ''हाँ, यह बारहवाँ खिलाड़ी था।'' वह केवल प्रमुख खिलाड़ियों को जलपान देने के लिए मैदान में आता था।

पानी देना... अचानक मेरा मन क्रिकेट से छलांग लगाकर श्रीचैतन्य भागवत ग्रंथ पर जा पहुँचा जिसमें श्रीचैतन्य महाप्रभु की लीलाओं का वर्णन है। एक समय जब श्रीचैतन्य महाप्रभु का अभिषेक किया जा रहा था, एक दासी विनम्रतापूर्वक वरिष्ठ भक्तों तक जल पहुँचाने की तुच्छ सेवा कर रही थी। उसका नाम था दुखी। श्रीचैतन्य महाप्रभु ने उसकी सेवा को देखा और उसे भगवद्प्रेम का आशीर्वाद देने के साथ-साथ उसका नाम बदलकर सुखी कर दिया (श्रीचैतन्य भागवत, मध्य खण्ड, अध्याय ९)।

श्रील प्रभुपाद ने हमें यही सिद्धान्त सिखाया कि हमें कभी भी खुद को आगे करने का प्रयास नहीं करना चाहिए। हमें केवल उन महान् भक्तों की सहायता करनी है जो श्रीकृष्ण के संदेश का प्रचार करने में व्यस्त हैं। एक

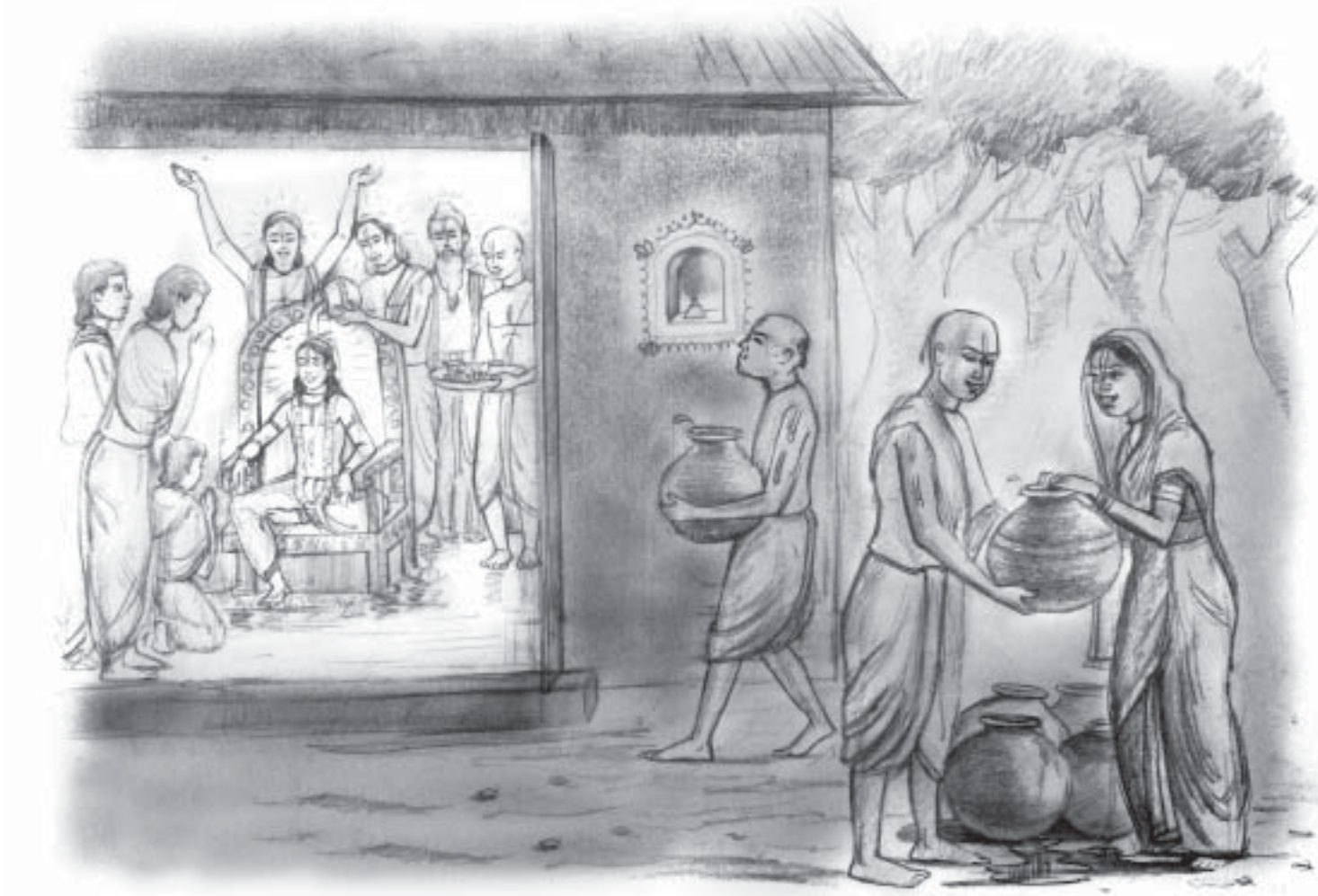

दक्ष सर्जन का उदाहरण लीजिए। जूनियर सर्जन मरीज को ऑप्रेशन के लिए तैयार करते हैं; सीनियर सर्जन कुछ मिनटों के लिए आता है और ऑप्रेशन करके निकल जाता है। पीछे जूनियर सर्जन मरीज को टाँके इत्यादि लगाने का कार्य करते हैं।

इस संसार में अधिकांश लोग मरीज हैं। वे अपने सच्चिदानन्द स्वरूप को भूलकर स्वयं को शरीर मानते हुए नाना दुःख भोग रहे हैं। जहाँ एक ओर महान् दक्ष भक्त भौतिकता से पीड़ित जीवों का ऑप्रेशन कर रहे हैं हमारा कर्तव्य एक जूनियर सर्जन के समान उनकी यथासम्भव छोटी-मोटी सहायता करना है। श्रीचैतन्य महाप्रभु ने हमें भगवान् के सेवकों के सेवक बनने की शिक्षा दी। वे कहते थे कि भगवान् को कृपा को प्राप्त करने के लिए विनम्रता रूपी योग्यता अत्यावश्यक है।

मैंने पुनः समाचारपत्र पर दृष्टि डाली। भारतीय क्रिकेट टीम का वह बारहवाँ खिलाड़ी विजेता जत्थे के साथ शान से खड़ा था क्योंकि उसने अपने मित्रों की विनम्रतापूर्वक सेवा की थी। मैं सोचने लगा, ''इस्कॉन में हम भी एक टीम के समान हैं। जिस प्रकार भारत ने विश्वकप जीता, हम भी सर्वत्र हरिनाम का

एक समय जब श्रीचैतन्य महाप्रभु का अभिषेक किया जा रहा था, एक दासी विनम्रतापूर्वक वरिष्ठ भक्तों तक जल पहुँचाने की तुच्छ सेवा कर रही थी।

प्रसार कर जीतना चाहते हैं। श्रील प्रभुपाद हमारे दक्ष कप्तान हैं और श्रीकृष्ण हमारे कोच। और हम विश्वस्त हैं कि श्रीकृष्ण की टीम सदैव विजयी रहती है; चाहे पाँच पाण्डव सौ कौरवों से ही युद्ध क्यों न कर रहे हों। हमारा मिशन प्रत्येक गाँव और शहर में हरिनाम का प्रचार करना है। वही हमारी विजय होगी। वही नैतिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों तथा निःस्वार्थ भक्ति एवं शाश्वत प्रेम की विजय और कलह, पाखण्ड, आत्मकेन्द्रित शोषण एवं कामवासना की पराजय होगी। तो यदि हम विजेता जत्थे का हिस्सा बनना चाहते हैं तो आइये हरिनाम का प्रचार करने वाले महान् भक्तों की विनम्रता से सहायता करें। पूरा संसार हमारा मैदान है।

युगावतार दास मुम्बई स्थित जे.जे.मैडिकल कॉलेज में ऐनाटॉमी के एसोसियेट प्रोफेसर हैं।

गाँव-गाँव में

अपने देश के गाँवों में कृष्णभक्ति का प्रचार करने के लिए एक हरे कृष्ण भक्त कुछ नया प्रयास करता है।

– मुरारी गुप्त दास

छह वर्ष का मंजूनाथ हाँफता हुआ अपने घर के आँगन में आया और जोर-जोर से चिल्लाने लगा, ''माँ, माँ! हरे कृष्ण वाले भक्त आए हैं। मैं जा रहा हूँ उनके साथ।''

अपनी माँ के उत्तर की प्रतीक्षा किए बिना वह गली में दौड़ पड़ा। वहाँ वह धोती-कुर्ता पहने एवं हर्षोल्लास के साथ कीर्तन और नृत्य करते हुए भक्तों के एक समूह को देखता है। उत्साहपूर्वक वह भी कीर्तनियों की टोली में शामिल हो जाता है। जब टोली अम्बिस्ते गाँव (मुम्बई से १२० कि.मी. पूर्व में स्थित एक गाँव) की गलियों से गुजर रही थी मंजूनाथ अपने दोस्तों को पुकारता है और वे सभी दौड़कर इस टोली में शामिल हो जाते हैं।

एक ओर घूँघट निकाले हुए स्त्रियाँ इस दृश्य को देखकर मन्द-मन्द मुस्कुरा रहीं थी तो दूसरी ओर पुरुष ताली बजाते हुए अपनी सहमति व्यक्त कर रहे थे। यह टोली आगे बढ़ते हुए एक प्राथमिक विद्यालय के मैदान पर पहुँचती है। यहीं हरे कृष्ण महोत्सव का आयोजन किया गया था। लगभग पचास बच्चों के साथ आरम्भ हुई इस टोली में अब दौ सौ से भी अधिक पुरुष सम्मिलित हो चुके थे।

भगवे वस्त्र पहने हुए छोटे कद का एक सुडौल हरे कृष्ण भक्त कीर्तन की अगुवाई कर रहा था। दोनों हाथ ऊपर उठाकर वह दर्शकों की ओर मुड़ा और मुस्कुराने लगे।

''हरे कृष्ण महोत्सव में आप सभी का स्वागत है!''

एक भ्रमणकारी प्रचारक से प्रेरणा

''काफी समय से मेरा सपना था कि मैं महाराष्ट्र के गाँव-गाँव में कृष्णभावना का प्रचार करूँ,'' रूप रघुनाथ दास कहते हैं।

महाराष्ट्र के ग्रामीण परिवेश में पले-बढ़े उन्होंने युवावस्था में मुम्बई में इस्कॉन के विद्यार्थियों हेतु एक छात्रावास में रहते हुए अपनी पढ़ाई पूरी की थी।

उन्होंने बताया, ''कॉलेज की पढ़ाई पूरी करने के बाद मैंने श्रील प्रभुपाद के आंदोलन में अपना जीवन समर्पित करने का निश्चय किया और मंदिर के ब्रह्मचारी आश्रम में रहने लगा।''

बेलगाँव, कर्नाटक स्थित इस्कॉन मंदिर में आरम्भिक थोड़ा समय बिताकर वे इस्कॉन मुम्बई की चौपाटी शाखा में मुख्य पुजारी के रूप में सेवा करने लगे। लगभग दस वर्षों तक उन्होंने यह सेवा की। जब अनेक नए भक्त पुजारी सेवा में सम्मिलित होने के लिए इच्छुक थे तो रूप रघुनाथ दास को एक बस द्वारा पुस्तक वितरण एवं हरिनाम प्रचार कर रहे भ्रमणकारी भक्तों के समूह का नेतृत्व करने के लिए कहा गया।

रूप रघुनाथ स्मरण करते हैं, ''मैं पूरी तरह से टूट गया। मैं पुजारी सेवा से इतना अधिक आसक्त था कि इसके अतिरिक्त कुछ और करने का विचारमात्र मेरे लिए हृदयविदारक था। सेवा न छोड़ने को इच्छुक मैं कई दिनों तक रोता और सुबकता रहा। अन्ततः मन्दिर के व्यवस्थापक मुझे मेरे गुरुजी परम पूज्य राधानाथ स्वामी महाराज के पास लेकर गए जिन्होंने मुझे

एक स्त्री श्री श्रीगौर-निताई का आशीर्वाद लेते हुए (नीचे बायें)। उत्साहपूर्वक स्वागत करते हुए बच्चे (ऊपर)। रूप रघुनाथ दास(चित्र में दायें) एवं जय शचीनन्दन दास कीर्तन की अगुवाई करते हुए।

गाँव-गाँव में भगवान् श्रीचैतन्य महाप्रभु की शिक्षाओं के प्रचार एवं पुस्तक वितरण के लिए प्रेरित किया।''

अगले तीन वर्षों तक रूप रघुनाथ ने भारत के एक कोने से दूसरे तक भ्रमण करते हुए श्रील प्रभुपाद की पुस्तकों का वितरण किया। सन् २००३ नासिक में लगे कुम्भ मेले के दौरान उनके नेतृत्व में उनके दल ने साठ हजार भगवद्दर्शन पत्रिकाओं का वितरण किया।

''पुस्तक वितरण के दिन मेरे लिए अत्यधिक प्रेरणादायक थे,'' वे स्मरण करते हैं। ''हम पूर्णतया भगवान् की कृपा पर निर्भर थे। ऐसी अनेक परिस्थितियाँ आतीं जब हमारी सहायता एवं सरंक्षण के लिए कोई नहीं होता था परन्तु किसी न किसी

प्रकार भगवान् की कृपा द्वारा हमें सरंक्षण प्राप्त हो जाता।''

किन्तु रूप रघुनाथ कुछ और भी करना चाहते थे।

''भारत में इस्कॉन की छवि एक शहरी संस्था की है और लोग सोचते हैं कि केवल धनी एवं शिक्षित व्यक्ति ही इसके सदस्य बन सकते हैं,'' वे कहते हैं। ''किन्तु भारत के सत्तर प्रतिशत लोग गाँवों में रहते हैं। यद्यपि अधिकांश लोग हिन्दु हैं, सर्वत्र अंधविश्वास एवं गलत धारणाओं का बोलबाला है और कुछ विशेष तिथियों पर औपचारिक रीति-रिवाजों के अतिरिक्त कुछ नहीं किया जाता है। क्योंकि उन्हें ठीक प्रकार से ज्ञान नहीं दिया जाता वे वैदिक साहित्य में पाई जाने वाली

कीर्तन से आकर्षित हुई भीड़ (दायें)। नीचे, श्रील प्रभुपाद की पुस्तकों को देखते हुए गाँववाले। बिल्कुल दायें, भगवद्गीता पर प्रवचन देते हुए रूप रघुनाथ दास।

ज्ञान-सम्पदा से वंचित रह जाते हैं। श्रील प्रभुपाद ने अनेक पुस्तकें लिखीं जिनमें प्राचीन वैदिक ज्ञान को इस प्रकार प्रस्तुत किया गया है कि आधुनिक व्यक्ति भी उसे स्वीकार कर सके। इस्कॉन इन शिक्षाओं के प्रचार हेतु शहरों में कार्य कर रहा है किन्तु मुझे एक भी ऐसा कार्यक्रम दिखाई नहीं दिया जिसमें ग्रामीण लोगों को आध्यात्मिक ज्ञान से शिक्षित किया जा रहा हो। मेरे हृदय में श्रील प्रभुपाद द्वारा दी गई श्रीचैतन्य महाप्रभु की शिक्षाओं को अपने गाँववासियों तक पहुँचाने की तीव्र लालसा उमड़ने लगी।''

एक दिन किसी ने रूप रघुनाथ को इस्कॉन के एक संन्यासी प.पू. इन्द्रद्युम्न स्वामी महाराज द्वारा लिखी एक पुस्तक 'डायरी ऑफ ए ट्रैवलिंग प्रीचर' दी। उन्होंने इस पुस्तक में इन्द्रद्युम्न स्वामी की उन रोमांचक कहानियों को बार-बार पढ़ा जिनमें उनके द्वारा विश्व के ऐसे इलाकों में किए जा रहे कृष्णभावना के प्रचार का वर्णन था जहाँ किसी भी भक्त ने अबतक पैर नहीं रखा है। इस पुस्तक ने रूप रघुनाथ को ऐसी प्रेरणा एवं मार्गदर्शन प्रदान किया जिसकी वे तलाश में थे।

''मैंने ऐसी प्रचार पद्धति को जाना जो अत्यधिक प्रभावशाली थी,'' वे कहते हैं। ''हरिनाम संकीर्तन, प्रसाद वितरण, नाटक एवं सांस्कृतिक कार्यक्रमों से भरे रंग-बिरंगे उत्सव मानव निर्मित सभी सीमाओं को तोड़कर हर प्रकार के लोगों को आकर्षित करते हैं। शीघ्र ही मेरे मन में भी इसी प्रकार की योजना बनने लगी।''

तभी उनके समक्ष एक सुअवसर आया। तीन वर्ष भ्रमण में बिताने के पश्चात् रूप रघुनाथ

देसी तरीका

गाँवों में कृष्णभावना का प्रचार करने की अपनी अलग चुनौतियाँ हैं। मुम्बई जैसे महानगर में हम बुद्धिजीवी वर्ग के लिए वातानुकूलित कमरों में कम्प्यूटर द्वारा मल्टीमीडिया शो इत्यादि प्रस्तुत कर सकते हैं। किन्तु गाँवों में अधनंगे गन्दे बच्चे, शर्मीली स्त्रियाँ, कठोर परिश्रम करने वाले सीधे-सादे किसान और अनपढ़ आदिवासी रहते हैं। यहाँ लोगों में निरक्षरता तथा उनके मनों में अंधविश्वास और शंकाओं की प्रचुरता रहती है। सड़कें कच्ची और बिजली कभी-कभार ही आती है।

अपने कामचलाऊ यंत्रों के साथ रूप रघुनाथ ने इस चुनौती को स्वीकार किया।

''हमने बैटरी द्वारा संचालित लाऊड्स्पीकर और प्रसाद से भरी बाल्टियों को बैलगाड़ी में लेकर गाँव-गाँव जाना प्रारम्भ किया। हम गाँव में कीर्तन करते और जब कुछ लोग एकत्र हो जाते तो छोटा प्रवचन देकर प्रसाद वितरित करते। हम बार-बार उन्हीं गाँवों का दौरा करने लगे और नवयुवक प्रश्न पूछने के लिए आगे आने लगे। मैं उनके साथ बैठकर बातें करता और धीरे-धीरे कुछ गाँवों में उन्होंने मुझे नियमित प्रवचन देने हेतु आमन्त्रित किया। कुछ गम्भीर नवयुवकों का एक समूह बन गया।''

को गाँवों में प्रचार करने का प्रस्ताव मिला। उनसे मन्दिर द्वारा प्राप्त किये गये नए कृषिक्षेत्र (फार्म) के आसपास के गाँवों में प्रचार हेतु नेतृत्व करने का अनुरोध किया गया। खुशी-खुशी उन्होंने तुरन्त इसे स्वीकार कर लिया। इस्कॉन चौपाटी के चार अध्यक्षों में से एक और उस कृषिक्षेत्र के प्रमुख सनत्कुमार दास ने इसमें उनका पूरा सहयोग दिया।

अपने प्रचार में आधुनिक तकनीक का प्रयोग करते हुए उन्होंने कृष्णभावना के सिद्धान्त प्रस्तुत करती एक चलित प्रदर्शनी बनाई। एक समय उन्होंने भगवद्गीता की मूलभूत शिक्षाओं, जैसे पुनर्जन्म, कर्म एवं योग पर आधारित एक अत्यधिक प्रभावशाली कोर्स में भाग लिया था। गाँव वालों के लिए इस उच्च तकनीकी मल्टीमीडिया कोर्स की नकल कर पाना एक चुनौती थी। रूप रघुनाथ ने मराठी में उन स्लाईडों का अनुवाद किया और ३ फुट लम्बी एवं ३ फुट चौड़ी प्लास्टिक पर उन्हें छपवा लिया, जिससे उन्हें स्टैण्ड पर लगाकर वे दर्शकों को दिखा सकते थे। इस कोर्स की सारी सामग्री को सरलता से एक छोटे बैग में ले जाया जा सकता था। वे इस बैग के साथ कार्यक्रमों में जाते और गाँव के किसी खुले इलाके में अपना छः दिवसीय प्राथमिक कोर्स प्रस्तुत करते।

जब कुछ गम्भीर लोगों का एक समूह बन गया तो उन्होंने हरे कृष्ण महोत्सव आयोजित करने का अपना सपना साकार करने का निर्णय किया।

उत्सव की तैयारियाँ

गाँव के कुछ लोगों का समूह गाँव के मुखियाओं से मिलता और उत्सव हेतु अनुमति प्राप्त करता। पाँच-दस भक्त गाँवभर में उत्सव की घोषणा करते और पण्डाल लगवाते। उत्सव से कुछ दिनों पूर्व भक्त गौर-निताई के विग्रहों को पालकी में लेकर पूरे गाँव में हरिनाम संकीर्तन करते। गाँववाले अपने घरों से बाहर आकर विग्रहों को नैवेद्य अर्पित करते और उनकी आरती उतारते। क्योंकि अनेक श्रद्धालु भगवान् की आरती के लिए पंक्ति में खड़े रहते और यदि सभी को अलग-अलग आरती करने दी जाती तो केवल एक गली को पार करने में ही दो से तीन घण्टे लग जाते, इसलिए भक्तों ने सामूहिक रूप से एक साथ आरती की व्यवस्था की। इन सब गतिविधियों से ग्रामवासी आने वाले रंगारंग उत्सव के लिए

तैयार हो जाते।

उत्सव का दिन

सभी उत्सव की आतुरता से प्रतीक्षा कर रहे थे - यह पूरे गाँव का उत्सव जो था। ग्रामवासियों ने अपने सबसे अच्छे कपड़े पहने हुए थे। सभी पुरुष चमकीली पगड़ियाँ बाँधकर और स्त्रियाँ रंग-बिरंगी साड़ियाँ पहनकर हरिनाम संकीर्तन में भाग लेती हुई पण्डाल में आईं। पण्डाल की ओर आने वाली मिट्टी की सड़क को साफ कर पानी का छिड़काव किया गया था जिससे मिट्टी न उड़े। स्त्रियों ने अपने घरों के सामने रंग-बिरंगी रंगोलियाँ बनाई थीं। पण्डाल के स्वागतद्वार को झण्डों एवं मंगलमय केलों के वृक्षों और पत्तों से सजाया गया था।

उल्लासभरे कीर्तन एवं एक छोटे प्रारम्भिक प्रवचन के पश्चात् इस्कॉन कृषि-क्षेत्र पर स्थित गुरुकुल के बच्चे सत्रहवी सदी में हुए महाराष्ट्र के महान् सन्त तुकाराम के जीवन पर प्रेरणादायक नाटक प्रस्तुत करते। सभी दर्शक बच्चों की भावनात्मक प्रस्तुति को मंत्रमुग्ध होकर देखते रह जाते। इन बच्चों ने सन्त तुकाराम के जीवन पर आधारित एक चलचित्र को घण्टों-घण्टों देखा था और अनेक दिनों तक इस नाटक के लिए अभ्यास किया था। ४५ मिनट के इस नाटक में भगवान् विठ्ठल (श्रीकृष्ण) में तुकाराम महाराज की श्रद्धा, कठिनाईयों से भरा उनका पारिवारिक जीवन, ब्राह्मणों द्वारा उन पर अत्याचार और अन्ततः कैसे वे सभी को हरिनाम संकीर्तन में प्रेरित करते हैं, अत्यधिक सुन्दर तरीके से प्रस्तुत किया गया।

अन्तिम दृश्य में सन्त तुकाराम आध्यात्मिक जगत् वापस लौट जाते हैं। भक्तों ने लकड़ी का एक गरुड़ पक्षी बनाया था जिस पर तुकाराम की भूमिका निभाने वाला बच्चा बैठकर आध्यात्मिक जगत् जाता है। बच्चा गाने लगता है, *आमि जातो अमचा गावा* (मैं अपने घर जा रहा हूँ) और घिरनी से जुड़ी रस्सी द्वारा खींचा जा रहा पक्षी धीरे-धीरे आकाश की ओर उड़ने लगता। इस दृश्य को देखकर लोग इतने भावविभोर हो जाते कि अनेकों की आँखों में आँसू भर आते।

एक स्थानीय व्यक्ति जो नाटकों का निर्देशन किया करता था, उसने दर्शकों से कहा, ''तुकाराम बने इस लड़के ने इतनी सुन्दरता से अपनी भूमिका निभाई है कि यदि आप किसी पेशेवर कलाकार या किसी फिल्म सुपरस्टार को लायेंगे तो वह भी इस छोटे बालक की भावनाओं की नकल नहीं कर पाएगा!''

पूरे गाँव में अनेक दिनों तक नाटक के विषय में चर्चा होती रहती।

इसके बाद रूप रघुनाथ दास कृष्णभावना के मूलभूत दर्शन पर एक छोटा प्रवचन देते। इस समय तक लोग नाटक से इतना मन्त्रमुग्ध हो गए होते और उनका हृदय इतना कोमल बन चुका होता कि वे सहजता से कृष्णभावना के संदेश को स्वीकार कर लेते। तत्पश्चात् अन्त में कीर्तन एवं सभी के लिए प्रसाद वितरण किया जाता।

उत्सव के बाद उस गाँव में चार दिवसीय गीता कोर्स आयोजित किया जाता, जिसकी परीक्षा भी ली जाती। वे कोर्स के सभी भागीदारों को सर्टीफिकेट देकर उन्हें आगे के कोर्स के लिए आमन्त्रित करते और धीरे-धीरे वह नियमित कार्यक्रम में परिवर्तित हो जाता।

धीरे-धीरे चारों ओर से सहायता आने लगी। गाँववाले चावल, दाल, घी, सब्जियाँ दान में देते और अनेक सेवाओं में भी योगदान करते। बेलगाँव के एक रसोईये वराह रूप दास ने सभी उत्सवों में भोज पकाने का बीड़ा उठाया। गाँव के अनेक सदस्यों ने धन, स्टेशनरी और कोर्स के भागीदारों के लिए भेंट दान में दीं। दूसरे भक्तों ने कीर्तन, पुस्तक वितरण, प्रसाद वितरण, विज्ञापन करने और प्रश्न-उत्तर बूथ पर सेवायें की।

हरिनाम की शक्ति

ग्रामवासी इस आध्यात्मिक उत्सव का स्मरण करते हुए कहते हैं कि ऐसा उत्सव न तो उन्होंने कभी देखा है और न ही कभी देखेंगे।

''जिस प्रकार का कीर्तन आपने उस दिन किया था वह अभी भी मेरे कानों में गूँज रहा है,'' एक ग्रामवासी बाद में भक्तों को बताता है। ''भगवान् के पवित्र नामों का संकीर्तन एवं बिना किसी चिन्ता के नृत्य करना अत्यधिक स्मरणीय और आनन्ददायक है।''

रूप रघुनाथजी के लिए रास्ता स्पष्ट है। हजारों गाँवों वाले महाराष्ट्र राज्य के एक गाँव में यदि वे एक दिन भी बिताते हैं तो अनेक वर्षों तक वे पूर्णतया व्यस्त रहेंगे। और पुनः वे पहले गाँव से प्रारम्भ कर सकते हैं।

सनत्कुमार दास एक गाँव में प्राप्त हुई सफलता के विषय में बताते हैं, जहाँ के अधिकांश निवासी आदिवासी हैं। वहाँ लोगों ने स्थानीय वस्तुओं का प्रयोग कर अपने हाथों से एक छोटा-सा मन्दिर बनाया है। यह गाँव की दूसरी झोपड़ियों के समान ही दिखता है किन्तु इसमें भगवान् के विग्रहों के चित्र हैं और प्रत्येक सुबह भक्त एकत्रित होकर जप एवं अन्य आध्यात्मिक कार्यक्रम करते हैं।

''हरिनाम द्वारा परिवर्तित हुए हृदय का यह जीता-जागता उदाहरण है,'' सनत्कुमार दास कहते हैं।

''मेरी इच्छा इन ग्रामवासियों को भगवान् श्रीकृष्ण के मित्रों में परिवर्तित करने की है,'' रूप रघुनाथजी बताते हैं, ''और कृष्णभावना के विषय में जागृति उत्पन्न करने तथा भगवान् श्रीकृष्ण के पवित्र नामों के वितरण की भी। हमने यह कार्यक्रम भगवान् के पवित्र नामों के संकीर्तन द्वारा प्रारम्भ किया। हरिनाम ही मुझे प्रेरित रखता है और यही सबको आकर्षित करता है।''

मुरारी गुप्त दास इस्कॉन मुम्बई में रहते हैं। उन्हें एम.बी.बी.एस. की डिग्री प्राप्त है एवं वे भगवद्दर्शन के अंग्रेजी संस्करण 'बैक टू गॉडहैड' में सेवा करते हैं।

भक्ति
जीवन का सर्वोच्च लक्ष्य

शुद्ध भक्ति के स्तर पर ही कोई दावे से कह सकता है कि "मैं श्रीकृष्ण का हूँ और श्रीकृष्ण मेरे हैं।"

– विशाखा देवी दासी

भगवान् श्रीकृष्ण की भक्ति सर्वाधिक प्रबल, शुद्ध एवं सभी प्रकार की क्रियाओं में सर्वोत्तम है। यह आत्मा की अंतर्निहित गतिविधि है। श्रीमद्भागवतम् में प्रह्लाद महाराज भक्ति की नौ विधियों का वर्णन करते हैं – श्रीकृष्ण के विषय में श्रवण, उनके शुद्ध नामों का कीर्तन या उनके विषय में बातें करना, उनका स्मरण, उनके चरणों की सेवा, उनकी पूजा, उनसे प्रार्थना करना, दास के भाव में उनकी सेवा करना, उनके मित्र बनना एवं उन्हें अपना सर्वस्व समर्पित कर देना। जब हम श्रीकृष्ण को प्रसन्न करने हेतु इनमे से एक या अधिक कार्य करते हैं तब उनके और हमारे बीच घनिष्ठता बढ़ जाती है।

श्रीकृष्ण का स्मरण

भक्ति के इन कार्यों में प्रत्येक कार्य अत्यन्त प्रभावशाली है और इनमें से एक या अधिक का शुद्धता से पालन करने पर हम जीवन का सर्वोच्च लक्ष्य अर्थात् कृष्णप्रेम प्राप्त कर सकते हैं। उदाहरणार्थ, श्रीकृष्ण-स्मरण की सेवा पर विचार करें।

हमारे विशाल वैदिक साहित्य में चार मूल वेदों (ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद एवं अथर्ववेद) और उनके अनुप्रमेय, जिनके अंतर्गत १०८ प्रमुख उपनिषद्, १८ पुराण, अनेक संहितायें, रामायण, महाभारत एवं अन्य ग्रंथों का समोवश है। इस बृहद् ज्ञानकोश का सारांश है भगवद्गीता। वैष्णव टीकाकारों के अनुसार भगवद्गीता के अठारह अध्यायों में से बीच के छः अध्याय उसका सार है। इन छः अध्यायों में भी नवम् अध्याय (परम गुह्य ज्ञान) सारांश है और इस अध्याय के अंतिम श्लोक संख्या ३४ को – जो पूरी गीता का मध्यांश है – परम सारांश कहा जा सकता है। श्रीकृष्ण इस श्लोक को *मन्मना* शब्द से आरम्भ करते हैं अर्थात् "सदैव मेरा चिन्तन करो।" इसलिए श्रीकृष्ण के सभी निर्देशों में उन्हें सदैव स्मरण रखने का निर्देश सार के सार का सार है।

श्रीकृष्ण का शुद्ध रूप से चिन्तन करना इतना प्रबल है कि प्रह्लाद महाराज ने भगवान् के सहज एवं निरन्तर स्मरण से उन्हें साक्षात् प्रकट होने के लिए प्रेरित कर दिया। तदोपरान्त भगवान् ने ब्रह्माण्ड के सर्वाधिक शक्तिशाली असुर और प्रह्लाद के पिता हिरण्यकशिपु को परास्त कर दिया। चूँकि उस समय प्रह्लाद मात्र पाँच वर्ष के थे उनका उदाहरण दिखाता है कि भक्ति करने के लिए उम्र कभी अड़चन नहीं बन सकती। जब तक व्यक्ति में सोचने की शक्ति है वह श्रीकृष्ण के विषय में सोचने या न

सोचने का चुनाव कर सकता है।

शुद्ध एवं मिश्रित भक्ति

प्रह्लाद महाराज की शुद्ध भक्ति निःस्वार्थ है – क्योंकि एक शुद्ध भक्त और भगवान् की इच्छायें एक ही होती हैं। परन्तु सभी भक्तिमार्ग शुद्ध भक्ति नहीं कहलाये जा सकते। ईर्ष्या, घमण्ड, अहिंसापूर्ण एवं क्रोध से की गई ईश्वर की सेवा तमोगुणी सेवा के अन्तर्गत आती है, क्योंकि उन लोगों और भगवान् की इच्छायें अलग-अलग होती हैं। जो भी तमोगुण में भक्ति करते हैं वे स्वयं को सर्वश्रेष्ठ भक्त सोचते हैं। ऐसे लोग जो भगवान् को अपनी माँगें पूरी करने का माध्यम मानते हुए उनकी भक्ति करते हैं, अथवा जो यश, ऐश्वर्य और भौतिक भोग की कामना से भक्ति करते हैं, उनकी भक्ति रजोगुण से प्रभावित भक्ति मानी जाती है। और सतोगुण में भक्ति करने वाले भक्त कर्मबन्धन से मुक्त होने के लिए भक्ति करते हैं।

यदि हमारी भक्ति में व्यक्तिगत इच्छाओं का लेशमात्र भी है तो वह भक्ति मिश्रित है। भक्ति तभी शुद्ध कहलाती है ''जब किसी का मन प्रत्येक जीव के हृदय में निवास करने वाले भगवान् के अलौकिक गुण, रूप, नाम, लीला आदि के श्रवण के प्रति सहजता से आकर्षित होता है। जिस प्रकार गंगा का जल सहज रूप से सागर की ओर बहता जाता है, उसी प्रकार ऐसी भक्ति भौतिक परिस्थितियों की रुकावटों के बावजूद भी निर्बाध रूप भगवान् की ओर बहती जाती है।'' (श्रीमद्भागवतम् ३.२९.१३) शुद्ध भक्तों को भगवान् की सेवा से कोई भौतिक या आध्यात्मिक लाभ की आशा नहीं रहती, वे निरन्तर भगवान् एवं उनके भक्तों को अपनी सेवा से प्रसन्न करना चाहते हैं।

लगभग पाँच सौ वर्ष पूर्व प्रयाग में श्रीचैतन्य महाप्रभु ने दस दिनों तक श्रील रूप गोस्वामी को भक्तियोग की शिक्षायें प्रदान की। बाद में श्रील रूप गोस्वामी ने अपनी उत्कृष्ट कृति 'भक्तिरसामृतसिन्धु' में इन शिक्षाओं का संकलन किया। इस पुस्तक के आरम्भिक दो श्लोक शुद्धभक्ति के गुणों एवं विशेषताओं को प्रस्तुत करते हैं –

अन्याभिलाषिता शून्यं ज्ञानकर्माद्यनावृतम्।
आनुकूल्येन कृष्णानुशीलनं भक्तिरुत्तमा।।

''जो भक्ति समस्त प्रकार की भौतिक इच्छाओं, अद्वैतवाद के ज्ञान तथा कर्मकाण्ड से मुक्त होती है और जिसका पालन श्रीकृष्ण की इच्छानुसार अनुकूल प्रकार से किया जाता है, वह भक्ति प्रथम श्रेणी की भक्ति है।'' (१.१.१)

सर्वोपाधिविनिर्मुक्तं तत्परत्वेन निर्मलम्।
हृषीकेण हृषीकेशसेवनं भक्तिरुच्यते।।

''भक्ति का अर्थ अपनी समस्त इन्द्रियों को परम भगवान् की सेवा में लगाना है जो सभी इन्द्रियों के स्वामी हैं। जब कोई जीवात्मा भगवान् की सेवा करता है तो उसके दो परिणाम होते हैं। पहला वह भौतिक उपाधियों से मुक्त हो जाता है और दूसरा यह कि भगवान् की सेवा करने मात्र से उसकी इन्द्रियाँ शुद्ध हो जाती हैं।'' (१.१.२)

शुद्धभक्ति की गहराइयाँ

जब कोई व्यक्ति भगवान् के प्रति अपनेपन की दृढ़ भावना विकसित कर लेता है, जब वह सोचता है कि श्रीकृष्ण और केवल श्रीकृष्ण ही मेरे प्रेम की विषयवस्तु हैं तथा वे ही मेरे एकमात्र संगी एवं परिजन हैं, तो उसी भावना को भक्ति कहा जाता है। प्रेम के बन्धन में बँधे श्रीकृष्ण और उनके सेवक कभी एक-दूसरे से अलग नहीं हो सकते। ऐसा आवश्यक नहीं कि सेवक केवल श्रीकृष्ण से ही आसक्त हो, वह उनके अन्य किसी अवतार से भी आसक्त हो सकता है। जैसे भगवान् राम। इस संदर्भ में श्रील रूप और श्रील सनातन गोस्वामी के छोटे भाई अनुपम (जिन्हें हम श्रीवल्लभ के नाम से भी जानते हैं) का उदाहरण है। अनुपम ने प्रयाग में अपना देहत्याग किया। तत्पश्चात् जब श्रीचैतन्य महाप्रभु जगन्नाथपुरी में श्रील सनातन से मिले तो उन्होंने उनसे कहा, ''तुम्हारे भाई अनुपम अभी नहीं हैं। वे बहुत अच्छे भक्त थे और उन्हें श्रीरघुनाथ में दृढ़ श्रद्धा थी।''

श्रील सनातन गोस्वामी ने कहा, ''बचपन से ही मेरा भाई श्रीराम का महान् भक्त था और वे गहन दृढ़ता से उनकी पूजा किया करता। वह निरंतर भगवान् रघुनाथ का कीर्तन करता और उनपर अपना मन केन्द्रित करता। वह सदैव रामायण में वर्णित श्रीराम की लीलाओं को सुनता और उन्हें गाता। रूप और मैं उससे बड़े थे। वह सदैव हमारे साथ रहता और श्रीमद्भागवतम् का श्रवण करता एवं श्रीकृष्ण के विषय में चर्चा करता। कई बार हम उसकी परीक्षा लेते। हम कहते, 'प्रिय वल्लभ, जरा हमारी बात सुनो। श्रीकृष्ण परम आकर्षक हैं। उनका सौन्दर्य, मधुरता एवं प्रेमभरी लीलायें अनन्त हैं। हम दोनों के साथ मिलकर श्रीकृष्ण की भक्ति करो। हम तीनों भाई एकसाथ रहेंगे और श्रीकृष्ण की लीला-चर्चा का आस्वादन करेंगे।' इस प्रकार हमारे बारम्बार कहने तथा हमारे प्रति सम्मान होने के कारण कुछ हद तक उसका मन हमारी बातों की ओर मुड़ गया। वल्लभ ने उत्तर दिया, 'मेरे प्रिय भाइयों, मैं आपके आदेशों का कैसे तिरस्कार कर सकता हूँ? मुझे श्रीकृष्ण मंत्र में दीक्षा प्रदान करें ताकि मैं भगवान् कृष्ण की भक्ति प्रारम्भ कर सकूँ।' ''

''इस तरह कहने के उपरान्त उस रात वह सोचने लगा, 'मैं किस तरह श्रीरघुनाथ के चरणों का आश्रय छोड़ सकता हूँ?' वह रात भर रोता रहा। अगले दिन प्रातः वह हमारे पास आया और अपनी व्यथा कह सुनाई। 'मैंने अपना सर्वस्व श्रीराम के चरणों में समर्पित कर दिया है, अतः मैं उन्हें नहीं छोड़ सकता। ऐसा करना मेरे लिए अत्यन्त पीड़ादायक होगा। आप दोनों कृपया मुझपर अपनी कृपा बरसायें तथा मुझे इस प्रकार आदेश दें जिससे मैं जन्म-जन्मान्तर तक श्रीरघुनाथ के चरणकमलों की सेवा कर सकूँ। उनका पादाश्रय त्यागना मेरे लिए असम्भव है और जब भी मैं इस विषय में सोचता हूँ तो मेरा हृदय विदीर्ण हो जाता है।''

''यह सुनने के पश्चात् हम दोनों उसका आलिंगन करते और उसे प्रोत्साहित करते हुए कहते, ''तुम एक महान् भक्त हो, क्योंकि भक्तिमार्ग में तुम्हारा दृढ़संकल्प अटल है।' इस

प्रकार हम उसकी प्रशंसा करते।''

श्रीचैतन्य महाप्रभु ने कहा, ''महान् हैं वे भक्त जो कभी भी भगवान् के आश्रय को नहीं छोड़ते और महान् हैं वे भगवान् जो कभी भी अपने सेवकों का परित्याग नहीं करते। यदि संयोगवश सेवक का पतन भी हो जाता है और वह भटक जाता है तो महान् हैं ऐसे स्वामी जो उसकी शिखा पकड़कर पुनः मार्ग पर खींच लाते हैं।'' (श्रीचैतन्य चरितामृत, अन्त्यलीला ३.४.२७-४७)

जिस प्रकार सेवक अपने स्वामी से प्रेमबन्धन में बँधा रहता है ठीक उसी प्रकार स्वामी भी अपने सेवक के प्रेम में बँधे रहते हैं।

शुद्ध भक्त की शुद्ध प्रार्थनायें

महारानी कुन्ती अपनी प्रार्थनाओं में शुद्धभक्ति द्वारा भगवद्प्राप्ति का उल्लेख करती हैं। वे कहती हैं, ''हे भगवन्! ऐसे लोग सरलता से आपके निकट आ सकते हैं जो भौतिक दृष्टि से निर्धन हैं। उच्चकुल में जन्म, महान् ऐश्वर्य, उच्चशिक्षा एवं शारीरिक सौन्दर्य के आधार पर भौतिक प्रगति का प्रयत्न करने वाले लोग हृदय की गहराई से आपको नहीं पुकार सकते।'' (श्रीमद्भागवतम् १.८.२६) भौतिक वस्तुओं से हीन व्यक्ति सहजता से श्रीकृष्ण का आश्रय ले सकता है। ऐसे लोग श्रीकृष्ण को अपनी एकमात्र सम्पत्ति, धन का स्रोत एवं भाग्यनिधि मानते हैं - ''श्रीकृष्ण आपके सिवा मेरा कोई नहीं है और कुछ भी नहीं है। मेरी उपेक्षा न करें क्योंकि आप ही मेरी एकमात्र सम्पत्ति हैं।'' महारानी कुन्ती के शब्दों में - ''हे भगवान्! जिस प्रकार सुरनदी गंगा निर्बाध गति से सागर की ओर निरंतर प्रवाहित होती है, उसी प्रकार बिना किसी विचलन के मेरी भावनाओं को अपनी ओर निरन्तर आकर्षित होने दीजिए।'' (श्रीमद्भागवतम् १.८.४२)

सन् १९७२ मायापुर, प.बंगाल में शान्तिदल के एक युवा कार्यकर्ता बॉब कोहेन हमारे संस्थापकाचार्य श्रील प्रभुपाद से मिले। चर्चा के दौरान श्रील प्रभुपाद ने बॉब से कहा, ''हम सभी श्रीकृष्ण के अंश हैं तथा हमें पुनः उनसे जुड़ना चाहिए। तुम चाहो तो तुरन्त श्रीकृष्ण से मिल सकते हो, अपनी मन में केवल यह विचार करो, ''मैं श्रीकृष्ण का हूँ, श्रीकृष्ण मेरे हैं।' बस इतना ही।''

बॉब – क्या कहा आपने? श्रीकृष्ण...

श्रील प्रभुपाद – श्रीकृष्ण मेरे हैं।

बॉब – मेरे?

श्रील प्रभुपाद – हाँ। मेरे । मेरे कृष्ण।

बॉब – वाह!

श्रील प्रभुपाद - कृष्ण मेरे हैं। कृष्ण मेरे हैं।

दूसरे शब्दों में अमिश्रित भक्ति द्वारा एक भक्त श्रीकृष्ण का बन जाता है और श्रीकृष्ण उस भक्त के बन जाते हैं।

और भगवान् के प्रति उस भक्त का प्रेम देश, काल अथवा परिस्थिति पर निर्भर नहीं करता। श्रीचैतन्य महाप्रभु इसी भाव को अपनी प्रार्थना (शिक्षाष्टकम्, श्लोक ८) में व्यक्त करते हैं - ''श्रीकृष्ण के अतिरिक्त मेरे अन्य कोई प्राणनाथ हैं ही नहीं। चाहे वे रुक्षता से मेरा आलिंगन करें अथवा मेरे समक्ष प्रकट न होकर मुझे मर्माहत ही क्यों न करें। वे स्वतन्त्र ईश्वर हैं, जैसा चाहें वैसा करें, परन्तु वे सदैव निरपेक्ष रूप से मेरे आराध्य भगवान् बने रहेंगे।''

भक्ति की शक्ति और उसे प्राप्त करने का तरीका

भक्तिरसामृत सिन्धु में श्रील रूप गोस्वामी शुद्धभक्ति के छह लक्षण बताते हैं -

१) शुद्धभक्ति समस्त भौतिक क्लेशों से तुरन्त राहत प्रदान करती है।

२) शुद्धभक्ति परम शुभदायक है।

३) शुद्धभक्ति हृदय को अवर्णननीय आनन्द से भर देती है।

४) शुद्धभक्ति अत्यन्त दुर्लभ है।

५) शुद्धभक्ति का पालन करने वाले मोक्ष को भी ठुकरा देते हैं।

६) शुद्धभक्ति ही श्रीकृष्ण को आकर्षित करने का एकमात्र साधन है।

बिना किसी हेतु की गई भक्ति में न केवल श्रीकृष्ण को आकर्षित करने की शक्ति है अपितु उन्हें आकर्षित करने का यही एकमात्र मार्ग है। और उन्हीं की कृपा से हम सर्वत्र उस भक्ति के परिणामों का अनुभव कर सकते हैं।

यह श्रील प्रभुपाद की शुद्धभक्ति की ही शक्ति है कि हम इस भगवद्दर्शन पत्रिका को पढ़ पा रहे हैं। उन्हीं की शक्ति से पूरे विश्व में भगवान् श्रीकृष्ण के संदेश का प्रचार हो रहा है एवं सभी ओर लोग हरे कृष्ण महामंत्र हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे, हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे का कीर्तन कर रहे हैं।

आध्यात्मिक जगत् में प्रत्येक वस्तु को एक व्यक्ति का स्वरूप प्राप्त होता है और शुद्धभक्ति की देवी हैं श्रीमति भक्तिदेवी। वे श्रीमती राधारानी का विस्तार हैं। श्रीकृष्ण सर्वाकर्षक हैं परन्तु श्रीमती राधारानी उन्हें भी आकर्षित करती हैं। इसी प्रकार भक्तिदेवी अथवा भक्तिभरी सेवा भी श्रीकृष्ण को आकर्षित करती है। अपने हृदय और जीवन में भक्तिदेवी का आह्वाहन करने के लिए हम भौतिक प्रयासों का आश्रय नहीं ले सकते - न भौतिक ज्ञान का, न भौतिक कार्यों का और न ही दोनों के मिश्रण का। हम भक्तिदेवी का आह्वाहन उनके प्रतिनिधि एक शुद्धभक्त के निर्देशों का पालन एवं उनकी सेवा करके कर सकते हैं।

विश्वभर में श्रील प्रभुपाद द्वारा स्थापित मंदिरों में प्रातः समय आचार्य नरोत्तमदास ठाकुर द्वारा रचित एक बंगाली भजन गाया जाता है। उसका पहला पद्य इस प्रकार से है -

श्रीगुरु चरणपद्म, केवल भक्तिसद्म,
वंदो मुई सावधान मते।
याहार प्रसादे भाई, ए भव तरिया याइ,
कृष्णप्राप्ति हय याहा हैते।

''अपने गुरु महाराज की नम्र भावना से सेवा करते ही हम शुद्धभक्ति प्राप्त कर सकते हैं। अत्यन्त सावधानी से हम उनके चरणकमलों में प्रणाम करते हैं। उनकी कृपा से हम भौतिक दुःखों के संसार रूपी सागर को पार करके श्रीकृष्ण को प्राप्त कर सकते हैं।''

विशाखा देवी दासी, श्रील प्रभुपाद की वरिष्ठ शिष्या हैं। वे पिछले तीस वर्षों से भगवद्दर्शन के लिए लेख एवं फोटों का योगदान कर रही हैं।

तीर्थों में तीर्थ श्रीनवद्वीप

कलियुग का प्रभाव बढ़ने पर जब सभी तीर्थ अपनी शक्तियाँ खोने लगते हैं तब नवद्वीप धाम और अधिक प्रभावशाली होता जाता है।

(निम्नलिखित लेख श्रील भक्तिविनोद ठाकुर कृत 'नवद्वीप धाम परिक्रमा खण्ड' से संकलित है।)

श्रीचैतन्य महाप्रभु को श्रीकृष्ण का छन्न अवतार कहा जाता है अर्थात् जिनकी महिमाओं का वर्णन शास्त्रों में गुप्त रूप से किया गया है। बहुत लम्बे समय तक माया देवी ने उन शास्त्रों को छिपाए रखा जिनमें श्रीचैतन्य महाप्रभु की लीलाओं का वर्णन है। जब श्रीचैतन्य महाप्रभु ने पृथ्वी पर अपनी लीलाएँ अप्रकट कर दीं, उनकी आज्ञाकारी सेविका मायादेवी उनकी इच्छा समझ गई। उन्होंने जीवों की आँखों से अंधकार का पर्दा उठा दिया और श्रीचैतन्य महाप्रभु के वास्तविक स्वरूप को सभी के समक्ष प्रकट कर दिया।

शास्त्रों के अनुसार जो व्यक्ति जन्म-जन्मान्तर तक श्रीकृष्ण की आराधना करने के पश्चात् भी कृष्णप्रेम प्राप्त नहीं कर सकते, उन्होंने निश्चित् ही घोर अपराध किए हैं। केवल भगवान् कृष्ण के पवित्र नामों का अपराधहीन कीर्तन ही कृष्णप्रेम प्रदान कर सकता है।

किन्तु श्रीचैतन्य महाप्रभु अवतार अत्यधिक विशेष है। यदि किसी गम्भीर भक्त ने कुछ अपराध भी किए हैं तो महाप्रभु की कृपा से वह भी शीघ्र कृष्णप्रेम प्राप्त कर सकता है। जब कोई निताई (बलरामजी के अवतार) एवं चैतन्य नामों को पुकारता है, कृष्णप्रेम उसे ढूँढता हुआ वहाँ आ जाता है। अपराध उसकी प्रगति में बाधा नहीं डालते और शीघ्र ही वह कृष्णप्रेम के आँसू बहाने लगता है। श्रीचैतन्य महाप्रभु की कृपा से उसके सभी अपराध शीघ्र ही उड़ जाते हैं, हृदय शुद्ध हो जाता है और कृष्ण-प्रेम का पूर्ण उद्गम हो जाता है। क्योंकि कलियुग में लोग असीमित अपराध करते हैं इसलिए उनके उद्धार हेतु श्रीचैतन्य महाप्रभु का आश्रय लेने के अतिरिक्त और कोई उपाय है ही नहीं।

श्रीचैतन्य महाप्रभु नवद्वीप में प्रकट हुए इसलिए यह स्थान सभी तीर्थों में शिरोमणि है। अन्य तीर्थस्थलों में अपराधियों को दण्ड मिलता है किन्तु नवद्वीप धाम में वे शुद्ध हो जाते हैं। इसी कारण महान् भक्त नवद्वीप का अनन्त गुणगान करते हैं।

जो नवद्वीप धाम में वास करता है वह बहुत ही भाग्यशाली है क्योंकि वहाँ रहने मात्र से उसे श्रीकृष्ण के प्रति आकर्षण हो जाता है। जिसको वहाँ जाने का अवसर प्राप्त होता है वह सभी अपराधों से मुक्त हो जाता है। जो फल अन्य सभी तीर्थों का भ्रमण करने पर प्राप्त होता है वह नवद्वीप धाम के केवल स्मरणमात्र से प्राप्त हो जाता है। यदि कोई भौतिक वस्तुओं की इच्छा

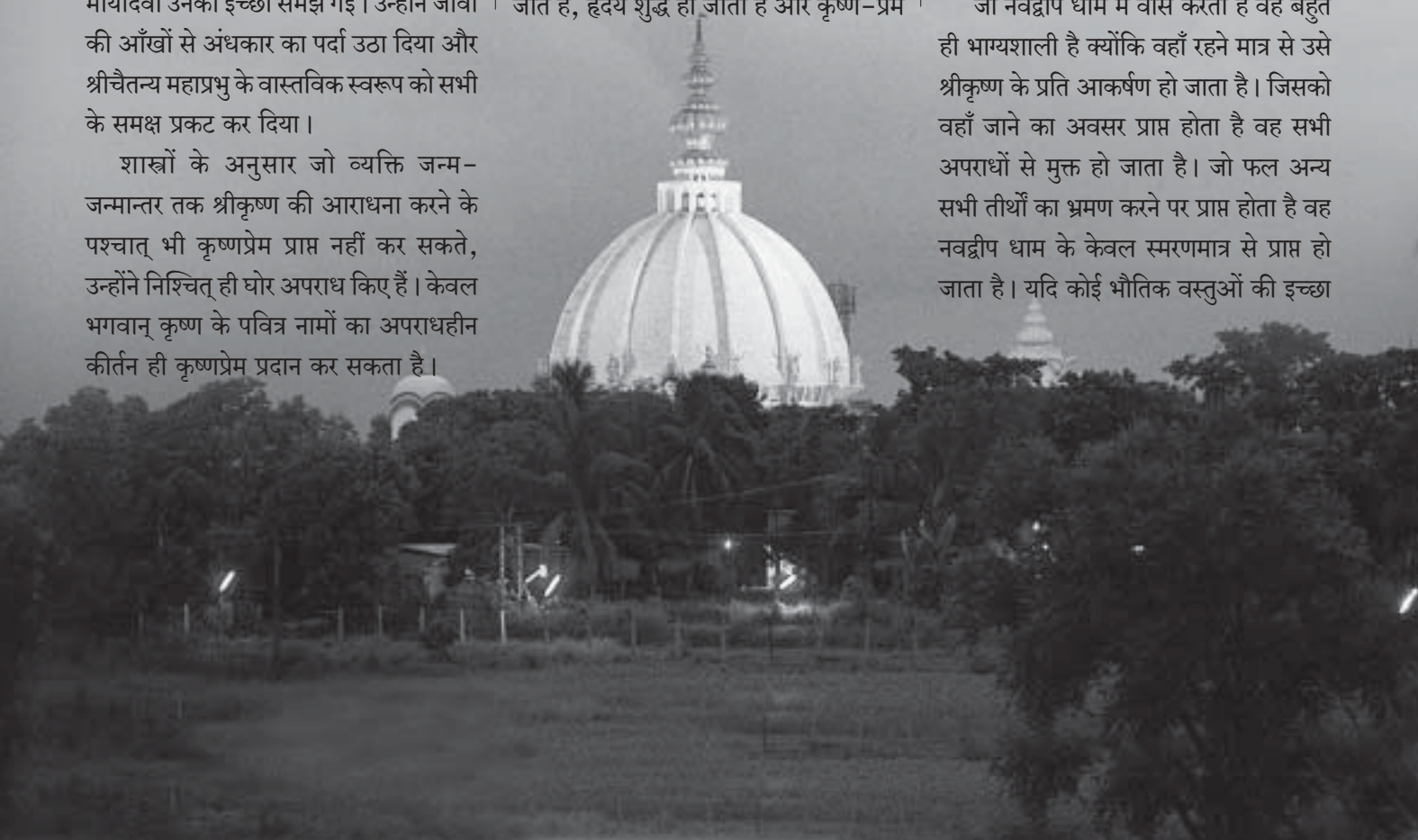

के साथ भी नवद्वीप धाम जाता है उसे भी पुनर्जन्म नहीं प्राप्त होता। शास्त्रों का कहना है कि जो भी नवद्वीप धाम में चलता है उसे प्रत्येक कदम चलने पर लाखो-लाखो अश्वमेध यज्ञों का फल प्राप्त होता है। और जो नवद्वीप में रहकर हरिनाम लेता है वह माया के शिकंजे से मुक्त हो जाता है। जो दूसरे तीर्थों में योगी जन दस वर्षों में प्राप्त करते हैं वह नवद्वीप में तीन रात में ही प्राप्त हो जाता है।

ब्रह्मन् साक्षात्कार द्वारा प्राप्त हुई वह मुक्ति जो दूसरे तीर्थों में अनेक तप करने पर प्राप्त होती है, नवद्वीप धाम में मात्र गंगा स्नान द्वारा प्राप्त हो जाती है। सात मुख्य पवित्र तीर्थों में सौ वर्षों तक रहने पर जो फल प्राप्त होते हैं वे नवद्वीप में केवल एक रात्रि निवास करने से प्राप्त हो जाते हैं।

नवद्वीप वास्तव में सबसे ऊँचा तीर्थ है। इसकी शरण लेने पर जीव अवश्य ही कलियुग को पार कर सकते हैं।

गंगा एवं यमुना जैसी पवित्र नदियाँ और प्रयाग सहित सात मुख्य तीर्थ नवद्वीप धाम में स्थित हैं। भगवान् की आज्ञा पर माया देवी उन जीवों की दृष्टि ढक देती है जो भगवान् से विमुख हैं और इसी कारण वे आध्यात्मिक धाम की महिमा को समझने में असक्षम रहते हैं।

ब्रह्माजी प्रार्थना करते हैं, ''वह दिन कब आयेगा जब मैं नवद्वीप धाम में घास का एक तिनका बनूँगा। तब मैं उन भक्तों के चरणकमलों की रज को अपने मस्तक पर धारण कर पाऊँगा जो श्रीचैतन्य महाप्रभु के चरणकमलों की सेवा में लगे हैं। हाय! हाय! श्रीचैतन्य महाप्रभु ने मेरे साथ धोखा किया है उन्होंने मुझे इस ब्रह्माण्ड के व्यवस्थापन कार्य में लगा दिया है। मेरे कर्मों का बंधन कब कटेगा? कब मैं मिथ्या अंहकार को त्यागकर अपने मन को शुद्ध कर पाऊँगा? और कब स्वयं को परम अधिकारी समझने का भ्रम तोड़कर मैं श्रीचैतन्य महाप्रभु के चरणकमलों में शुद्ध सेवक के रूप में आश्रय ले पाऊँगा?''

इन आध्यात्मिक विषयों को समझने में व्यक्ति को भौतिक तर्क-वितर्क का प्रयोग नहीं करना चाहिए जो व्यर्थ एवं अमंगलमय है। श्रीचैतन्य महाप्रभु की दिव्य लीलाएँ गहरे सागर के समान हैं जबकि भौतिक तर्क केले की पंखुड़ी के समान है। जो कोई भी इस भौतिक जगत् को तर्क-वितर्क द्वारा पार करना चाहता है वह व्यर्थ में ही अपना समय गवाँ रहा है। उसे कुछ भी प्राप्त नहीं हो पाएगा। किन्तु झूठे तर्क-वितर्कों को त्यागकर और साधु एवं शास्त्रों के मार्गदर्शन द्वारा व्यक्ति शीघ्र ही श्रीचैतन्य महाप्रभु को प्राप्त कर सकता है। नित्यानंद प्रभु की आज्ञा पर सभी श्रुति(वेद), स्मृति(पुराण) एवं तन्त्र शास्त्र निरन्तर नवद्वीप धाम की महिमा का गुणगान कर रहे हैं। इन शास्त्रों के पठन एवं भक्तों के शब्दों को स्वीकार कर हम नवद्वीप धाम की वास्तविकता का साक्षात्कार कर सकते हैं।

कलियुग में सभी तीर्थस्थल अत्यधिक दुर्बल हो गए हैं केवल नवद्वीप ही परम शक्तिशाली है। भगवान् की इच्छा से यह तीर्थ लम्बे समय से छिपा था और इसकी महिमा का लोगों को ज्ञान नहीं था। जब कलियुग का प्रभाव बढ़ने लगा और तीर्थ अपनी शक्तियाँ खोने लगे तो उस समय सभी जीवों के कल्याण हेतु परम भगवान् ने सोचा, ''बीमारी ढूँढने के पश्चात् डॉक्टर एक विशेष औषधि प्रस्तावित करता है। बीमारी के अनुसार ही दवाई दी जाती है। क्योंकि कलियुग बहुत प्रभावशाली हो गया है और बीमारी बहुत बढ़ गई है, शक्तिशाली दवाई के बिना इस बीमारी से कोई राहत नहीं मिल सकती। यदि मैं अपने धाम, नाम और रूप को प्रकट नहीं करूँगा, जिसे मैंने बहुत समय से छिपाकर रखा था, तो जीवों का उद्धार कैसे होगा? सभी जीव मेरे सेवक हैं और मैं उनका स्वामी हूँ। यदि मैं उनकी सहायता नहीं करूँगा, उनका उद्धार कभी नहीं होगा।''

ऐसा कहकर श्रीचैतन्य महाप्रभु अपने नाम, धाम एवं पार्षदों के साथ पृथ्वी पर प्रकट हुए। भगवान् ने वचन दिया है कि वे सदैव जीवों का भौतिक जगत् के कष्टों से उद्धार करेंगे।

श्रीचैतन्य महाप्रभु ने कहा, ''व्यक्ति की योग्यता और अयोग्यता को देखे बिना इस अवतार में मैं मुक्त रूप में कृष्णप्रेम के उस खजाने को वितरित करूँगा जो ब्रह्माजी के लिए भी दुर्लभ है। मैं देखता हूँ कि कैसे यह कलि इन जीवों का विनाश करेगा! मैं नवद्वीप धाम को प्रकट करूँगा और भगवान् के पवित्र नामों के संकीर्तन द्वारा इस कलि रूपी सर्प के जहरीले दाँतों को तोड़ दूँगा। जब तक मेरे नाम का संकीर्तन होगा, कलि नियंत्रित रहेगा।''

ऐसा कहकर गौरहरि(श्रीचैतन्य महाप्रभु) कलियुग के प्रारम्भ में अपनी अन्तरंग शक्ति के साथ नवद्वीप में प्रकट हुए। माया का पर्दा हटाकर गौरचन्द्र ने अपनी लीलाओं को गौरमण्डल में प्रकट किया।

कलियुग में उस दुःखी एवं धूर्त व्यक्ति से दुर्भाग्यशाली कोई नहीं है जो ऐसे कृपालु श्रीचैतन्य महाप्रभु की आराधना नहीं करता या जो ऐसे कृपालु एवं अचिन्त्य नवद्वीप धाम का तिरस्कार करता है। इसलिए बाकी सभी आसक्तियों एवं इच्छाओं का त्यागकर अपने मन को केवल नवद्वीप धाम पर केन्द्रित कीजिए।

शिक्षा कुत्तों के लिए नहीं

यहाँ हम श्रील प्रभुपाद और दर्शनशास्त्र के प्रोफेसर जॉन मिजे के बीच लॉस ऐन्जिलिस में २३ जून १९७५ को हुई वार्ता को आगे बढाते हैं।

श्रील प्रभुपाद – (एक शिष्य को) यह श्लोक ढूँढो– *ब्रह्मभूत प्रसन्नतात्मा न शोचति न कांक्षति।*

शिष्य – *ब्रह्मभूत प्रसन्नात्मा न शोचति न कांक्षति समः सर्वेषु भूतेषु मदभक्तिं लभते पराम्।* ''इस प्रकार जो दिव्य पद पर स्थित है, वह तुरन्त परब्रह्म का अनुभव करता है और पूर्णतया प्रसन्न हो जाता है। वह न तो कभी शोक करता है, न किसी वस्तु की कामना करता है। वह प्रत्येक जीव पर समभाव रखता है। उस अवस्था में वह मेरी शुद्ध भक्ति प्राप्त करता है।''

श्रील प्रभुपाद – अर्थात् व्यक्ति को ब्राह्मण के स्तर पर आना होगा। तब वह भक्ति कर सकता है। *समः सर्वेषु भूतेषु मद्भक्तिं लभते पराम्* – ऐसे ब्रह्म के स्तर पर वह प्रत्येक जीव को भगवान् के अंश के रूप में देखते हैं। यह समभाव है। वह गाय में, हाथी में, वृक्ष में, चींटी में, मनुष्य में आत्मा को देखता है। यह *समः सर्वेषु भूतेषु* है।

अज्ञानतावश व्यक्ति सोचता है, ''वृक्ष में कोई आत्मा नहीं है, गाय में आत्मा नहीं है, अन्य पशुओं में भी आत्मा नहीं है–केवल हममें आत्मा है।'' यह अज्ञानता है। किन्तु जब आप सतोगुण के स्तर पर आते हैं तो *समः सर्वेषु भूतेषु* की योग्यता जागृत होती है। एक भक्त एक चींटी को भी नहीं मारना चाहता क्योंकि वह जानता है, ''यह भी एक आत्मा है जो परमात्मा का अंश है और अपने कर्मों के कारण इसे चींटी की शरीर मिला है किन्तु मुझे एक मनुष्य का शरीर मिला है। मुझमें आत्मा के वही गुण हैं जो इसमें हैं; इसमें आत्मा के वही गुण हैं जो मुझमें हैं। बस इसका शरीर मेरे शरीर से भिन्न है। यह भी दुःख भोग रही है और इससे भिन्न शरीर प्राप्त कर मैं भी दुःख भोग रहा हूँ – किन्तु मैं सोच रहा हूँ कि मैं सुख भोग रहा हूँ।'' यह समः सर्वेषु भूतेषु है।

(श्लोक पढने वाले शिष्य को) *समः सर्वेषु भूतेषु* का अर्थ क्या है?

शिष्य– *समः* अर्थात् 'समान भाव से'; *सर्वेषु* अर्थात् 'सभी'; *भूतेषु* अर्थात् 'जीवों पर'। ''वह प्रत्येक जीव पर समभाव रखता है।''

श्रील प्रभुपाद–तो जब आप ब्राह्मण के स्तर पर आओगे तो समभाव से देख सकोगे। संयुक्त राष्ट्र के लोगों को *ब्रह्मभूतः* या आध्यात्मिक स्तर

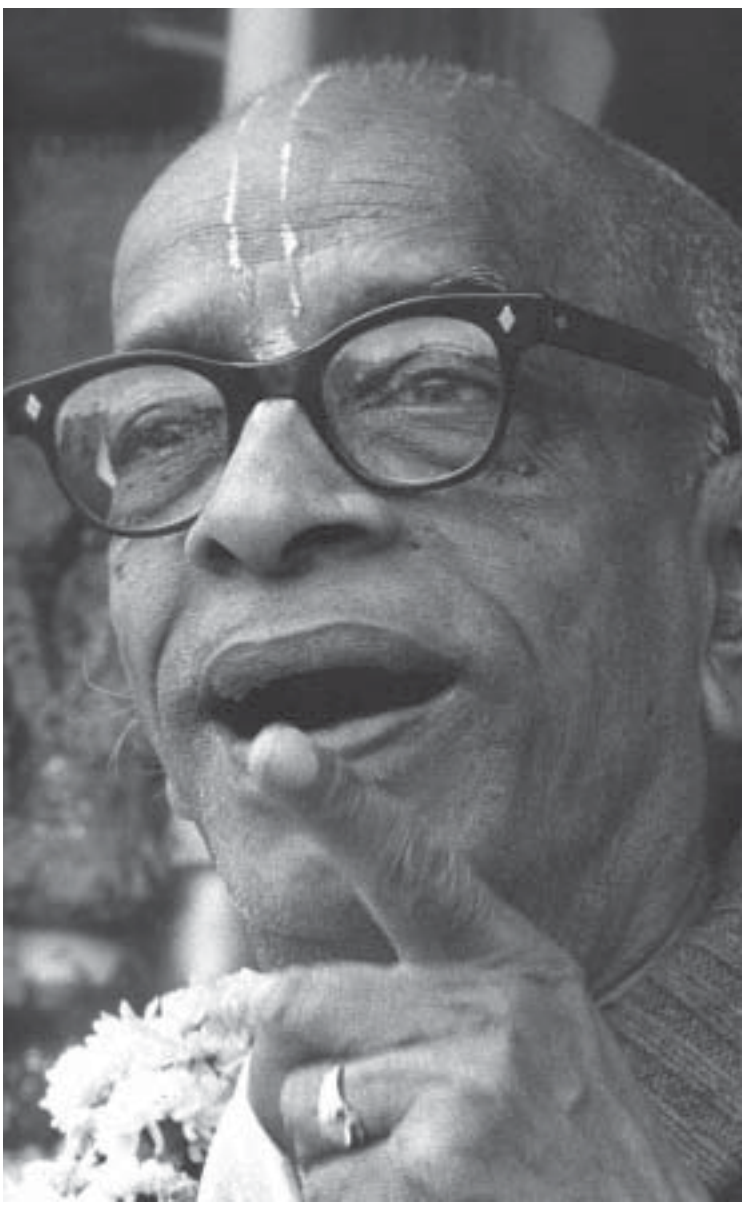

का ज्ञान नहीं है। वहाँ वे प्रस्ताव पास कर रहे हैं किन्तु फिर भी बाहर लड़ाई हो रही है, क्योंकि उनके पास आध्यात्मिक दृष्टि नहीं है। वे *समः सर्वेषु भूतेषु* नहीं देख सकते। तो राजनेताओं का मार्गनिर्देशन ब्राह्मणों द्वारा होना चाहिए। यह समाज की सही संरचना है–ऐसे लोगों द्वारा मार्गनिर्देशन, जिन्हें पूर्ण आध्यात्मिक समझ है। दूसरे शब्दों में कहें तो राजनीतिज्ञों और प्रशासकों को पहले ब्राह्मणों से निर्देश लेने चाहिए और फिर राजनीति में भाग लेना चाहिए। इस प्रकार वे भी प्रथम दर्जे के व्यक्ति बन जायेंगे। एक बार चुनाव करने पर उन्हें कुर्सी से नीचे नहीं उतारना पड़ेगा।

पहले चुनाव करना और फिर उतारना, यह कार्य ही गलत है। आपको नहीं मालूम कि किसका चुनाव करना चाहिए क्योंकि आप ब्राह्मणों द्वारा निर्देशित नहीं हैं। यह गलती है। पूरा समाज शूद्रों या कुछ वैश्यों द्वारा निर्देशित हो रहा है।

किन्तु आज क्षत्रियों या ब्राह्मणों द्वारा मार्गनिर्देशन नहीं होता। इसलिए समाज में शान्तिपूर्ण वातावरण के लिए चार विभाग होने चाहिए।

(शिष्य से) यह श्लोक ढूँढो, *चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं गुणकर्मविभागशः।*

शिष्य–यह भगवद्गीता के चौथे अध्याय का तेरहवाँ श्लोक है। अनुवाद – ''प्रकृति के तीनों गुणों और उनसे सम्बद्ध कर्म के अनुसार मेरे द्वारा मानव समाज के चार विभाग रचे गये। यद्यपि मैं इस व्यवस्था का स्रष्टा हूँ, किन्तु तुम यह जान लो कि मैं इतने पर भी अव्यय अकर्ता हूँ।''

श्रील प्रभुपाद–हाँ, श्रीकृष्ण ने इन चार वर्णों–ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र – का सृजन किया है किन्तु वे स्वयं इन चारों से परे हैं। वे न तो ब्राह्मण हैं, न क्षत्रिय, न वैश्य और न शूद्र। वे दिव्य हैं और केवल मानव समाज की भलाई चाहते हैं। उसी प्रकार हमारा सिद्धान्त भी वही है–मानव समाज को शान्तिमय और प्रगतिशील बनाना, हम इस पद्धति की स्थापना करना चाहते हैं। ब्राह्मण वर्ग क्षत्रियों का मार्गनिर्देशन करेगा, क्षत्रिय या प्रशासक वैश्यों का मार्गनिर्देशन करेंगे। वैश्य वे हैं जो कृषि, गोरक्षा और व्यापार करते हैं। और शूद्र वे हैं जो न तो ब्राह्मण हैं, न क्षत्रिय और न वैश्य। वे कामगार और सहायक होते हैं।

तो इस प्रकार ये विभाग आवश्यक हैं। ब्राह्मणों को क्षत्रियों का मार्गनिर्देशन करना चाहिए, क्षत्रियों को राज्य पर शासन करना चाहिए, वैश्यों को अन्न उत्पादन करना चाहिए और शूद्रों को सहायता करनी चाहिए। सार्वजनिक लाभ हेतु सहयोग – और उद्देश्य है आध्यात्मिक साक्षात्कार। यह पूर्ण समाज है। यदि प्रत्येक व्यक्ति शूद्र और जीवनलक्ष्य से विहीन होगा तो समाज अस्त–व्यस्त हो जायेगा। जैसे, आपके देश में अध्ययन की इतनी सुविधायें होने के पश्चात् भी छात्र केवल हिप्पी बन रहे हैं; बेकार। ऐसा क्यों हो रहा है? मैं इतने विश्वविद्यालयों में गया हूँ। मैंने स्वयं देखा है। और यदि उनसे कहा जाये, ''यदि आप कुत्ते–बिल्लियों के समान व्यवहार करेंगे तो अगले जन्म में कुत्ते–बिल्ली बनेंगे,'' तो वे कहेंगे, ''इसमें बुरा क्या है यदि मैं कुत्ता बन भी गया तो?'' (हँसी)

यह तथाकथित आधुनिक शिक्षा प्रणाली का परिणाम है। छात्र कुत्ते बनने के लिए तैयार हैं। छात्र यह नहीं सीखते कि कुत्ते और मनुष्य में क्या अंतर है। परिणामस्वरूप वे कुत्ते कि सुविधायें चाहते हैं – कि कुत्ता सड़क पर भी सहवास कर सकता है। छात्र सोच रहे हैं कि कुत्ते का जीवन श्रेष्ठ है। इसलिए प्रोफेसर जुडा (बर्कले ग'ड्युट थियोलिजिकल यूनियन के) ने मुझे यह कहते हुए पत्र लिखा, ''कैसे आपने नशा करने वाले इन हिप्पियों को श्रीकृष्ण और मानवता का सेवक बना दिया, यह देखकर मैं अचम्भित हूँ।'' ये उनके शब्द हैं।

डॉ.मिजे–क्या मैं एक और प्रश्न पूछ सकता हूँ?

श्रील प्रभुपाद–हाँ।

डॉ.मिजे–यह मन और आत्मा के सम्बन्ध के विषय में है कि मन को कैसे पता चलता है कि आत्मा है?

श्रील प्रभुपाद–ऐसे प्रोफेसरों से शिक्षा लेकर जिनके मन साफ हैं। एक छात्र आपके पास क्यों आता है? क्योंकि उसका मन साफ नहीं है। आपको मनोविज्ञान – विचार करना, अनुभव करना और इच्छा करना – सिखाकर उसका मन साफ करना होता है। इसलिए एक छात्र को यह सीखने के लिए एक ज्ञानी व्यक्ति के पास जाना होता है जिसे यह ज्ञान हो कि मन को कैसे समझा जाये, मन के कार्यों को कैसे समझा जाये और कैसे उनसे व्यवहार किया जाये।

इसके लिए शिक्षा की आवश्यकता है। एक कुत्ता यह शिक्षा प्राप्त नहीं कर सकता किन्तु मनुष्य कर सकता है। इसलिए यह मनुष्य का कर्तव्य है कि मन को नियंत्रित करना सीखे और कुत्ते–बिल्लियों के समान व्यवहार न करे। वह सच्चा मनुष्य है। उसे जिज्ञासु होना चाहिए– ''यह क्यों हो रहा है? इस प्रकार क्यों होता है?'' और उसे ज्ञान लेना चाहिए। वह मानव जीवन है। और यदि वह जिज्ञासा नहीं करता, यदि वह शिक्षा नहीं लेता तो उसमें और कुत्ते में क्या अंतर रह जाता है? वह कुत्ते के समान ही बना रहेगा। उसे मानव जीवन का अवसर प्राप्त हुआ है। उसे इस अवसर का लाभ उठाकर जिज्ञासा करनी चाहिए कि वास्तविकता क्या है और केवल कुत्ते के समान व्यवहार – आहार,निद्रा, भय और मैथुन – नहीं करना चाहिए। यह मनुष्य और कुत्ते में भेद है। यदि वह जिज्ञासा नहीं करता कि मन को कैसे नियंत्रित किया जाये तो वह मनुष्य भी नहीं है। एक कुत्ता कभी जिज्ञासा नहीं करता। कुत्ता जानता है ''जब मैं भौंकता हूँ तो लोगों को कष्ट होता है।'' किन्तु वह कभी नहीं पूछेगा, ''कैसे इस भौंकने की आदत को नियंत्रित किया जाये?'' क्योंकि वह कुत्ता है वह ऐसा नहीं कर सकता।

एक मनुष्य पूछ सकता है, ''जब मैं गलत कार्य करता हूँ तो लोग मुझसे ईर्ष्या करते हैं, तो कैसे मैं मन को नियंत्रित करूँ?'' वह मनुष्य है। यह मनुष्य और कुत्ते में अंतर है। इसलिए वेदों का आदेश है 'आपको मनुष्य जीवन प्राप्त हुआ है इसलिए जिज्ञासा करो।'' यह मानव समाज है। एक कुत्ते का पिता कभी कुत्ते से नहीं पूछेगा, ''बेटा, विद्यालय जाओ।'' नहीं, क्योंकि वे कुत्ते हैं।

हरिनाम की लीलायें

मृत्यु एवं भयावह स्थिति के बीच भगवान् के नामों की शक्ति को प्रदर्शित करती एक घटना।

– प.पू. इन्द्रद्युम्न स्वामी

कुछ महीने पहले मैंने अटलांटा जाने के लिए लॉस एन्जिलिस से हवाई जहाज पकड़ा। अटलांटा से फ्लाईट बदलकर मुझे सैंटियागो जाना था। तीन वर्ष पूर्व मैं अंतिम बार सैंटियागो गया था और पुनः वहाँ के भक्तों से मिलने के लिए बहुत उत्सुक था।

अटलांटा में उतरकर अपनी अगली फ्लाईट पकड़ने से पहले मैं प्रतीक्षाकक्ष की ओर बढ़ा। भीड़ से भरे कमरे में टेलिवजन चल रहा था और ठीक उसके सामने केवल एक सीट खाली थी। मैं बैठ गया। टी.वी. पर एक महिला का समाचार दिखाया जा रहा था जो हाल ही की अपनी एक हवाई यात्रा के दौरान अचानक बीमार हो गई थी। ऐसा लग रहा था कि जब उसने एक परिचारिका से ऑक्सीजन माँगी तो उसे मना कर दिया गया था। बार-बार माँगने और उसकी बिगड़ी स्थिति देखकर परिचारिका ने उसे ऑक्सीजन देने का प्रयास किया परन्तु ऑक्सीजन की बोतल ने काम नहीं किया। कुछ ही देर में उस महिला की मृत्यु हो गई।

समाचारवाचक ने कहना जारी रखा कि किस प्रकार एयरलाईंस वाले अपनी सफाई देने का प्रयास कर रहे हैं किन्तु यह स्पष्ट है कि उनके कर्मचारियों की नजरअंदाजी के कारण ही यह दुर्घटना घटी। ऐसी आपातकालीन स्थिति में क्या करना चाहिए, शो में आये एक विशेष अतिथि ने इसके कुछ नुस्खे बताकर समाचार समाप्त किया – ''तुरन्त परिचारिका को बुलाइये, ऑक्सीजन दीजिए और मरीज को शान्त रखने का प्रयास कीजिए।''

मैं सोचने लगा, ''जमीन से हजारों फुट ऊपर ऐसी घटनाओं की कल्पना भी कितनी भयावह हैं।''

इसका साक्षात्कार करने के लिए मुझे अधिक प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ी।

मैं हवाई जहाज में चढ़ा, अपनी सीट ली और जपमाला पर जप करने लगा। चूँकि मैं नियमित रूप से हवाई यात्रायें करता हूँ, इसका लाभ देते हुए मुझे सामान्य दर्जे से व्यवसायी दर्जे में स्थानान्तरित कर दिया गया। मेरे चारों ओर धनी एवं बड़े-बड़े लोग बैठे थे जिन्होंने उस फ्लाईट के लिए हजारों डॉलर भरे थे।

मुझे भान होने लगा कि उनमें से अनेक लोगों को मेरी वहाँ उपस्थिति खल रही थी। मेरे निकट बैठी एक स्त्री अपने नाखुनों को घिसती हुई सन्देहजनक दृष्टि से मुझे देख रही थी। उसके साथ बैठकर समाचारपत्र पढ़ते युवक ने अपना सिर उठाकर मेरी ओर देखा और असहमति में झटक दिया। जब मैंने अपनी बगल में बैठी महिला से पूछा कि क्या वह पहली बार सैंटियागो जा रही थी तो उसने कोई उत्तर नहीं दिया।

लोगों के अनावश्यक ध्यान आकर्षण से बचने के लिए मैंने अपनी माला रख दी और एक पुस्तक पढ़ने लगा। जैसे ही सभी यात्री चढ़ गये हवाई जहाज के दरवाजे बंद हो गये। सभी परिचारिकायें मेरे निकट से होती हुई विमान के पिछले भाग में किसी कार्य हेतु जाने लगीं और उन्हें देखकर मैं धीरे से मुस्कुराया।

अचानक मुझसे कुछ सीट दूर बैठा एक व्यक्ति अनियंत्रित रूप से हिलने लगा। उसकी आँखें पलट गईं और मुँह से झाग बहने लगी। सबसे पहला विचार मुझे आया कि शायद उसे दिल का दौरा पड़ा है। मैंने तुरन्त आसपास देखा कि कोई परिचारिका निकट है क्या, किन्तु वे सभी पीछे जा चुकीं थी।

मेरे आसपास के यात्री स्तब्ध हो मानो बर्फ की तरह जम गये थे। नाखून घिसती महिला के हाथ थम गये। समाचारपत्र पढ़ता व्यक्ति भयभीत हो घूरने लगा और फड़फड़ाता हुआ वह रोगी अपनी कुर्सी से नीचे गिरने लगा।

मुझे टी.वी. पर दिये गये निर्देश का स्मरण हो आया। मैं तुरन्त उठा और उस व्यक्ति को पकड़ते हुए कुर्सियों के बीच के गलियारे में सावधानीपूर्वक लिटा दिया। मैंने उसे शान्त करने का भरसक प्रयत्न किया किन्तु वह चेतना खो रहा था। मैंने अन्य यात्रियों की ओर देखा। वे अभी तक स्तब्ध थे, उनकी आरामदायक वास्तविकता को इस वीभत्स दृश्य ने झकझोर दिया था।

मैं चिल्लाया, ''जल्दी कोई परिचारिका को बुलाओ!''

मेरे पास बैठी महिला ने डर से अपनी आँखें बन्द कर ली थी। अन्यों ने अपने मुँह फेर लिया और खिड़की से बाहर देखने लगे।

मैंने उस व्यक्ति की पत्नी की ओर देखा जो रोये जा रही थी।

मैंने पूछा, ''क्या इन्हें मिरगी है?''

''नहीं, नहीं!'' बदहवासी में उसने कहा।

''क्या ये किसी बीमारी के लिए दवाई ले रहे हैं?'' मैंने पूछा।

''नहीं, कुछ नहीं!'' सिर हिलाते हुए उसने उत्तर दिया।

''क्या इन्हें पहले भी कोई हृदयरोग हुआ है?'' मैंने फिर पूछा।

''कृपया इन्हें बचाइये!'' वह चिल्लाती रही।

उसके पति साँस के लिए तड़प रहे थे। मैंने उन्हें ऐसी दशा में रखने का प्रयास किया जिससे उन्हें साँस लेने में आसानी हो। मैंने जप करना आरम्भ किया, पहले धीरे-धीरे किन्तु यह देखते हुए कि वे अपने प्राण त्याग सकते हैं, जोर-जोर से।

मैंने पास बैठे यात्रियों की ओर देखा जो अभी तक निर्जीव-से घूर रहे थे। ''ऑक्सीजन!'' मैंने चीखते हुए अपील की।

कोई नहीं हिला।

सहायता के लिए मुझे ही कुछ करना था।

''भगवान् के लिए!'' मैं चिल्लाया। ''कोई तो तुरन्त जाकर ऑक्सीजन की बोतल लाये जिससे इस व्यक्ति के प्राण बचाये जा सकें।''

इस बार शायद उन्हें मेरी आवाज सुनाई दी। दो आदमी कूदे और कुछ ही क्षणों में ऑक्सीजन की बोतल ले आये। हम तीनों उन्हें ऑक्सीजन देने का प्रयास करने लगे और मैंने उनके चेहरे पर मास्क पहना दिया। तभी मैंने देखा कि अनेक परिचारिकायें दौड़ती हुईं हमारी ओर आ रहीं थी।

उन्होंने तुरन्त स्थिति को अपने नियंत्रण में ले लिया और ऑक्सीजन देकर अपने मोबाईल से डॉक्टर को बुलाने लगीं। कुछ ही क्षणों में कप्तान भी आ पहुँचा और डैफिब्रीलेटर यंत्र मँगवाया जिसका उपयोग आपातकालीन दिल के दौरों में किया जाता है।

तंग स्थान होने के कारण मैं वहाँ से बाहर नहीं निकल पाया और उस अफरा-तफरी के बीच अचल बैठा रहा। वह व्यक्ति अभी भी हिल रहा था। बाँहें फैलाकर उन्हें फड़फड़ा रहा था और पीड़ा से कराह रहा था। इससे अधिक कुछ और कर पाने में असक्षम मैं उतनी आवाज में जप करता रहा जिससे वह हरिनाम के एक-एक शब्द को स्पष्ट रूप से सुन पाये। एक क्षण के लिए वह बाह्य चेतना में आया और हमारी आँखें मिली।

मैं उससे कहना चाहता था कि सबकुछ ठीक हो जायेगा किन्तु मुझे लगा कि शायद ऐसा नहीं होगा। मैं उसके ऊपर झुका तथा और जोर से जप करने लगा। यदि इसकी मृत्यु होनी ही है तो कम से कम शरीर छोड़ते समय यह भगवान् का नाम तो सुने।

चित्रकार जनार्दन सालकर

एक ओर परिचारिकायें एवं अन्य सदस्य उसकी सहायता करने का प्रयास कर रहे थे तो दूसरी ओर मैंने अपना जप जारी रखा। मैं किसी डॉक्टर के आने की प्रतीक्षा कर रहा था। बीच-बीच में परिचारिकायें उस व्यक्ति की स्थिति को बदलकर उसे आराम देने का प्रयास करतीं। मानो एक अनन्त काल बीत गया और अन्ततः एक मैडिकल टीम वहाँ पहुँची।

मैं खड़ा हुआ और उस व्यक्ति की कुर्सी पर बैठ गया। वे तुरन्त उसे एक स्ट्रेचर में लिटाकर ले गये। पीछे-पीछे उनकी पत्नी भी थी। उस समय तक वे लगभग अचेत हो गये थे। मैंने एक परिचारिका को कहते सुना, ''शायद नहीं बचेगा।''

मैं अपनी सीट पर आया और बैठकर पुनः अपनी माला पर जप करने लगा। अभी भी मेरा दिल जोर-जोर से धड़क रहा था और पूरे बदन में सनसनी फैल रही थी। एक परिचारिका ने मुझे पीने के लिए पानी दिया।

शान्त होने के पश्चात् मैंने अपने चारों ओर दृष्टि घुमाई। नाखून घिसने वाली महिला मुझे देखकर सौम्यता से मुस्कुराई, मानो मेरी करनी से प्रसन्न होकर अपनी कृतज्ञता व्यक्त कर रही हो। जब मैंने अखबार पढ़ने वाले व्यक्ति की ओर देखा तो उसने सहमति में अपना सिर हिला दिया। मेरे निकट बैठी स्त्री अन्ततः बोल पड़ी, ''बहुत-बहुत धन्यवाद।''

मैं थक चुका था। कुछ ही देर में मुझे नींद आ गई और जब मेरी आँख खुली तो मैंने पाया कि हम काफी दूर आ चुके थे तथा मेरे चारों ओर लगभग सभी यात्री सो रहे थे। मैं इस पूरे प्रसंग पर विचार करने लगा। मैंने सोचा -

हम नहीं जानते कि हमारे साथ कब ऐसा हो जाये। अकसर हम केवल समाचारों में ऐसी घटनाओं के विषय में पढ़ते हैं और मान लेते हैं कि ये केवल दूसरे लोगों के साथ ही घटती हैं। मैं प्रार्थना करता हूँ कि जब मेरा समय आये तो कोई मेरे लिए भी भगवान् के नामों का जप करे।

इस विषय पर अधिकाधिक मनन करने पर मैंने अनुभव किया कि चूँकि मैं अकसर अकेला यात्रा करता हूँ, इस बात की पूरी सम्भावनायें हैं कि अपना शरीर छोड़ते समय या तो मैं अकेला होऊँगा अथवा अनजान लोगों के बीच रहूँगा। विचारमात्र ने मुझे चिन्ताग्रस्त कर दिया।

क्या होगा यदि हवा में ३७,००० फुट ऊपर अचानक दिल के दौरे से मेरी मृत्यु हो जाये? या फिर किसी दूर-दराज के देश में रात के समय अकेले बिस्तर पर लेटे-लेटे? किन्तु ऐसा भी हो सकता है कि हम अपनी मृत्यु की अच्छी तरह योजना बनायें और प्रेमी भक्तों से घिरे हों किन्तु फिर भी किन्हीं कारणवश हमें लज्जित होना पड़े। मृत्यु सभी के लिए एक कठिन परीक्षा है। मैं आशा करता हूँ कि जब वह दिन आये तो मेरी सेवाओं के लिए मेरा स्मरण किया जाये, न कि इसलिए कि मेरी मृत्यु किन परिस्थितियों में हुई है।

मुझे हाल ही में सुनी एक कथा याद हो आई। एक व्यक्ति से पूछा गया कि उसके मित्र की मृत्यु कैसे हुई थी। उसने उत्तर दिया, ''यह मत पूछो कि उसकी मृत्यु कैसे हुई, यह पूछो कि उसने जीवन कैसे जीया।''

नौ घण्टे पश्चात् विमान सैंटियागो उतरा। यात्री उतरने लगे। तभी विमान की प्रमुख लेखाधिकारी मेरे पास आई और मुझसे कुछ मिनट रुकने के लिए कहा। मैं धैर्य से बैठ गया। जब सभी यात्री उतर गये तो वह अन्य कर्मचारियों के साथ मेरे पास आई।

उसने कहा, ''तुरन्त सहायता करने के लिए आपका बहुत-बहुत धन्यवाद। अब शायद उस व्यक्ति का जीवन बच जायेगा।''

मैंने उत्तर दिया, ''यह मेरा सौभाग्य है कि मैं कुछ सहायता कर पाया। हालाँकि मैंने कुछ अधिक नहीं किया। वस्तुतः आपने ही उसे आवश्यक सुविधायें देकर उसकी सहायता की।''

''बहुत अच्छा लगा आपको इस प्रकार देखकर,'' एक परिचारिका ने कहा।

''किन्तु उस दौरान आप क्या गा रहे थे?'' एक अन्य परिचारिका ने पूछा।

''मैं भगवान् के नामों का जप कर रहा था,'' मैंने उत्तर दिया। ''मैं भारतीय ग्रन्थों में वर्णित एक धर्म का पालन करता हूँ। उसके अनुसार श्रीकृष्ण परम भगवान् हैं। ग्रन्थों के अनुसार जहाँ भी श्रीकृष्ण के नामों का जप या कीर्तन किया जाता है वहाँ भयभीत होने की कोई आवश्यकता नहीं होती।''

''वह तो हम स्वयं देख ही रहीं थी। क्यों नहीं?'' उस प्रमुख लेखाधिकारी ने कहा।

''हाँ, बिल्कुल,'' शेष परिचारिकाओं ने एक स्वर में कहा।

''और इसी के लिए हम आपको धन्यवाद देना चाहती हैं,'' एक परिचारिका ने मुझसे कहा।

''मैंने कुछ नहीं किया,'' मुस्कुराते हुए मैंने कहा। ''यह तो भगवान् के पवित्र नामों के कारण हो पाया। तो अगली बार जब भी कुछ भयानक घटना घटे हरे कृष्ण का कीर्तन करना याद रखना।''

''क्या आप हमारे लिए इसे एक कागज पर लिख सकते हैं?'' एक परिचारिका ने कहा।

''हाँ, हाँ। क्यों नहीं'' मैंने उत्तर दिया।

उन्हें कागज पर हरे कृष्ण महामंत्र लिखकर देने के पश्चात् मैंने अपना सामान उठाने के लिए हाथ बढ़ाया। किन्तु वहाँ खड़े परिचारकों ने मुझसे पहले ही उन्हें उठा लिया और मुझे दरवाजे तक छोड़कर आये। अप्रवासी औपचारिकताओं को पूरा कर बाहर निकलते हुए मैं मन ही मन हरिनाम की लीलाओं पर आश्चर्य करने लगा।

श्रीमद्भागवतम् (६.३.३१) में कहा गया है -

तस्मात् संकीर्तनं विष्णोर्जगन्मंगलमंहसाम्।
महतामपि कौरव्य विद्ध्यैकान्तिकनिष्कृतम्।।

श्रील शुकदेव गोस्वामी ने कहा, ''हे राजन्, भगवान् के पवित्र नामों का कीर्तन भयंकर पापों के फलों को समूल नष्ट कर सकता है। इसलिए सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में संकीर्तन सर्वाधिक मंगलकारी कार्य है। कृपया इसे समझने का प्रयास करें जिससे अन्य लोग भी इसे गम्भीरता से स्वीकार कर सकें।''

गोहत्या का विरोध

हैदराबाद – १५ नवम्बर २००९ को प.पू. भक्तिराघव स्वामी के नेतृत्व में एक रैली निकाली गई जिसमें लोगों ने सड़कों पर निकलकर गोहत्या पर पूर्ण प्रतिबन्ध लगाने की माँग की और गाय को भारत के राष्ट्रीय पशु के रूप में घोषित करने लिए कहा। हैदराबाद की सड़कों को भगवे रंग से रंगा गया था।

भक्तिराघव स्वामी को हाल ही में इस्कॉन वर्णाश्रम विभाग का प्रमुख नियुक्त किया गया है। यह विभाग भारत के ग्रामीण विकास मंत्रालय पर आधारित होगा। पूजनीय स्वामीजी ने कहा कि जबतक लोग गोरक्षा के महत्व को नहीं समझेंगे और गायों की रक्षा हेतु एकजुट होकर प्रयास नहीं करेंगे, तबतक हमें समस्याओं से भरे आज के संसार में सुख एवं सम्पदा की अपेक्षा नहीं करनी चाहिए।

वृन्दाकुण्ड की सातवीं वर्षगाँठ

नन्दग्राम, उ.प्र – यहाँ स्थित इस्कॉन के मंदिर की सातवीं वर्षगाँठ के उपलक्ष्य में २७ जनवरी से १४ फरवरी २०१० तक होने वाले कार्यक्रमों के अन्तर्गत व्रजधाम के तीर्थस्थलों की पदयात्रा का आयोजन किया जायेगा। वृन्दाकुण्ड नन्दग्राम के निकट खेतों में स्थित है, जहाँ श्रीकृष्ण और बलराम नन्द महाराज और यशोदा मैया के साथ रहते थे।

केम्ब्रिज विश्वविद्यालय में प.पू.तमालकृष्ण गोस्वामी स्मारक

गत २५ नवम्बर को केम्ब्रिज यूनिवर्सिटी के क्लेयर हॉल में एक बेंच को प.पू.तमालकृष्ण गोस्वामी के स्मारक के रूप में स्थापित किया गया। इसमें उनके अनेक मित्रों एवं सहकर्मियों ने भाग लिया। भावनाओं से भरे इस अवसर पर स्थानीय लोगों ने उनका स्मरण एवं सराहना करते हुए उन्हें ''जनता का आदमी'' बताया, कि किस प्रकार वे सभी के लिए चिन्तित रहते थे।

उपस्थित अतिथियों में से बोलने वाले कुछ ये थे – विश्वविद्यालय के अध्यक्ष सर मार्टिन हैरिस; हिन्दुत्व एवं धर्मों के तुलनात्मक अध्ययन के प्रोफेसर जुलियस लिप्नेर, जो केम्ब्रिज में गोस्वामीजी के पीएच.डी. के सुपरवाइजर थे; कॉलेज के ट्यूटर और लाइब्रेरियन रोसमेरी लफ्फ तथा इस्कॉन इंग्लैण्ड के जी.बी.सी. प्रघोष दास।

स्पेन के कैदियों में प्रसाद वितरण

स्यूटा, स्पेन– ४ दिसम्बर को कृष्णकृपा दास और उनकी पत्नी राधाप्रिया दासी (प.पू.भक्तिचारु स्वामी के शिष्य) ने यहाँ की स्थानीय जेल के कैदियों, गार्ड तथा रिपोर्टरों सहित ४०० लोगों के लिए प्रसाद बनाया और वितरित किया।

तिहाड़ जेल में कीर्तन, नृत्य और प्रसाद

नई दिल्ली – इस्कॉन नई दिल्ली के भक्तों ने २ दिसम्बर को तिहाड़ जेल में एक कार्यक्रम आयोजित किया जिसमें एक घण्टे तक चले कीर्तन में सभी कैदी ऊँचे कूदते हुए नाचने लगे। डायरेक्टर जनरल श्री बी.के गुप्ता ने इस्कॉन जेल मंत्रालय की अंतर्राष्ट्रीय गतिविधियों की सराहना की और निवासियों से भगवद्गीता पढ़ने एवं हरे कृष्ण महामंत्र का जप करने का आग्रह किया। २००९ की मिस इंडिया एकता चौधरी कार्यक्रम की विशेष अतिथि थीं।

उपर्युक्त समाचारों के लिए राजाराम दास, माधव स्मुलेम, व्रजेन्द्रनन्दन दास, वरसाना देवी दासी और आनन्द चैतन्य दास का योगदान रहा।

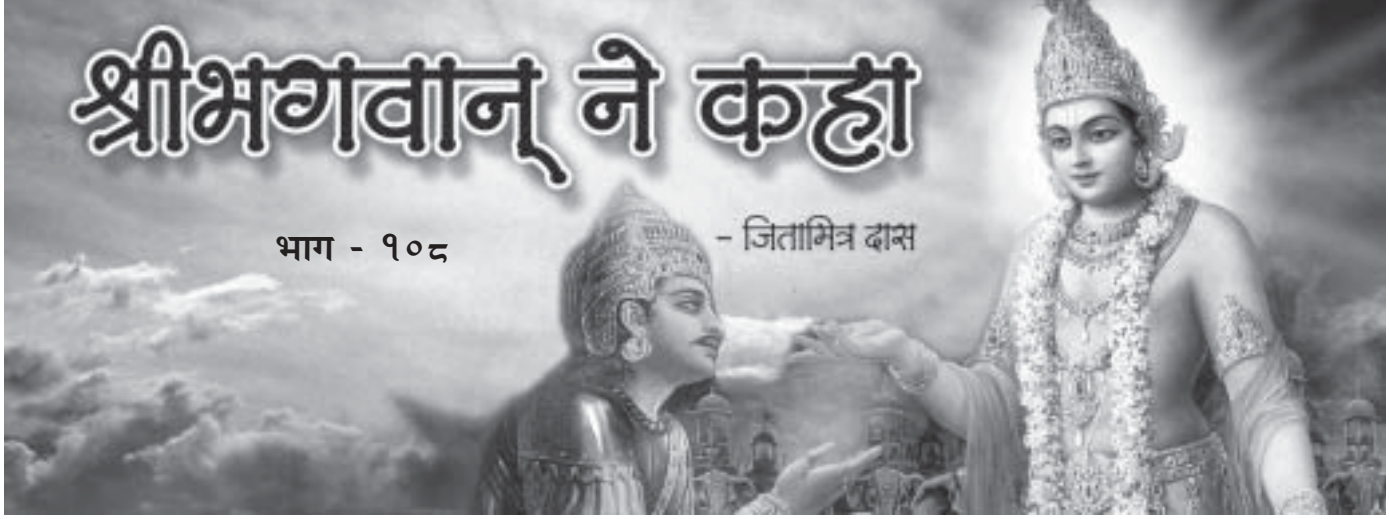

भाग - १०८

- जितामित्र दास

भगवान् श्रीकृष्ण समझाते हैं कि एक विरक्त व्यक्ति के लिए भौतिक कार्य मात्र स्वप्न से अधिक कुछ नहीं हैं।

या निशा सर्वभूतानां
तस्यां जागर्ति संयमी।
यस्यां जाग्रति भूतानि
सा निशा पश्यतो मुनेः।।

अर्थात् 'जो सब जीवों के लिये रात्रि है, वह आत्मसंयमी के जागने का समय है और जो समस्त जीवों के जागने का समय है वह आत्मनिरीक्षक मुनि के लिये रात्रि है।'
(भगवद्गीता २.६९)

पिछले श्लोक से सम्बन्ध

इस श्लोक में श्रीभगवान् अर्जुन को शिक्षा दे रहे हैं कि जिस व्यक्ति ने अपनी इन्द्रियों को श्रीकृष्ण की सेवा में लगाकर अपनी बुद्धि को स्थिर कर लिया है उस व्यक्ति और सामान्य व्यक्तिगण जो अपनी इन्द्रियों को भोगने में लगे हुये हैं, में उतना ही अन्तर है जितना अन्तर दिन और रात में हुआ करता है। पिछले श्लोक में भगवान् ने निष्कर्ष निकाला था कि उसी व्यक्ति की बुद्धि स्थिर है जिसने अपनी इन्द्रियों को स्वयं न भोग कर श्रीकृष्ण की सेवा में लगाया है। अब इस श्लोक में भगवान् यह बतला रहे हैं कि ऐसा व्यक्ति भौतिक संसार के सामान्य लोगों की तुलना में किस प्रकार अलग हो जाता है। श्लोक संख्या ५४ में अर्जुन ने चार प्रश्न किये थे जिनमें से चौथा प्रश्न था- स्थिर बुद्धि वाला व्यक्ति कैसे चलता है? तो यहाँ पर उस प्रश्न के उत्तर में श्रीभगवान् कह रहे हैं कि स्थिर बुद्धि वाले व्यक्ति की चाल संसारी लोगों की चाल से बिल्कुल उल्टी होती है। इस श्लोक में भगवान् की चार अत्यन्त महत्वपूर्ण शिक्षायें हैं, जिनकी हम क्रम से चर्चा करेंगे-

१) जो समस्त प्राणियों के लिये रात्रि है

श्लोक के प्रारम्भिक शब्द हैं- *या निशा सर्वभूतानाम्।* अर्थात् जो सामान्य लोगों के लिये रात्रि है। तो यहाँ पर भगवान् यह कहना चाहते हैं कि कृष्णभावनाभावित जीवन सामान्य लोगों के लिये रात्रि के समान है। श्लोक संख्या ४४ में भगवान् ने कहा था 'जो लोग इन्द्रियभोग और भौतिक ऐश्वर्य के प्रति अत्यधिक आसक्त होते हैं और ऐसी वस्तुओं से मोहग्रस्त हो जाते हैं, उनके मनों में भगवान् के प्रति भक्ति का दृढ़ निश्चय नहीं होता है।' इस श्लोक अर्थात् श्लोक संख्या ६९ के तात्पर्य में श्रील प्रभुपाद लिखते हैं- ''विचारवान् पुरुषों या आत्मनिरीक्षक मुनि के कार्य भौतिकता में लीन पुरुषों के लिये रात्रि के समान हैं। भौतिकतावादी व्यक्ति ऐसी रात्रि में अनभिज्ञता के कारण आत्मसाक्षात्कार के प्रति सोये रहते हैं।' दिनांक २९ अप्रैल १९६६ को न्यूयार्क में इस श्लोक पर प्रवचन देते हुये श्रील प्रभुपाद ने कहा- *''अब, मान लीजिये कि किसी व्यक्ति ने समस्त प्रकार के भौतिक भोगों को त्याग दिया है तथा वह श्रीकृष्ण की दिव्य आध्यात्मिक सेवा में लग गया है तो उसे देखकर भौतिकतावादी लोग कहते हैं- 'यह कैसा बेकार का व्यक्ति है कि इसने सभी प्रकार के भौतिक भोगों को त्याग दिया है!' ''* तो यहाँ पर भगवान् कह रहे हैं कि भौतिकतावादी व्यक्ति के लिये कृष्णभावनाभावित जीवन रात्रि के अन्धकार के समान प्रतीत होता है।... जिस समय रूस में हरे कृष्ण आन्दोलन फैल रहा था, उस समय रूसी सरकार ने देखा कि हरेकृष्ण भक्तगण न तो शराब ही पीते हैं और न ही मांस खाते हैं, वे तो केवल हरे कृष्ण का कीर्तन ही करते रहते हैं तो रूसी सरकार ने हरे कृष्ण भक्तों के इस कार्य को कानूनी अपराध माना। रूसी सरकार का यह विचार था कि अच्छे स्वास्थ्य के लिये शराब पीना और मांस खाना अत्यन्त आवश्यक है तथा हरेकृष्ण महामंत्र की एक ही ध्वनि यदि बार-बार सुनी जाये तो यह दिमाग के लिये अत्यन्त घातक है। उनके लिये हरेकृष्ण महामंत्र की ध्वनि रात्रि के अन्धकार के समान है।

भौतिकतावादियों के लिये गीता का संदेश रात्रि के समान है: गीता के अन्त में भगवान् ने कहा है कि जो लोग तपस्वी और भक्त नहीं हैं उन्हें गीता का सन्देश न दिया जाये क्योंकि यहाँ पर भगवान् कह रहे हैं कि ऐसे व्यक्तियों के लिये आध्यात्मिक चर्चा अन्धकार के समान नीरस है। यदि ऐसे लोगों को श्रीकृष्ण का सन्देश बतलाया जायेगा तो वे इस सन्देश का आदर नहीं करेंगे। वे सोचते हैं कि इन्द्रियतृप्ति

का जीवन दिन के प्रकाश के समान है तथा इन्द्रियतृप्ति का त्याग करके श्रीकृष्ण की शरण लेना रात्रि के अन्धकार के समान है।

२) उसमें आत्मसंयमी पुरुष जागता है

इसके पश्चात् श्लोक के शब्द हैं- *तस्यां जागर्ति संयमी।* अर्थात् उसमें आत्मसंयमी पुरुष जागता है। यदि पिछली शिक्षा और इस शिक्षा को एकत्र किया जाये तो यह बात बनती है कि कृष्णभावनाभावित जीवन भौतिकतावादियों के लिये तो रात्रि के समान है, परन्तु उसमें कृष्णभावनाभावित व्यक्ति जागता है। इस श्लोक के तात्पर्य में श्रील प्रभुपाद लिखते हैं- 'आत्मनिरीक्षक मुनि भौतिकतावादियों की रात्रि में जागे रहते हैं। मुनि को आध्यात्मिक अनुशीलन की क्रमिक उन्नति में दिव्य आनन्द का अनुभव होता है, किन्तु भौतिकतावादी कार्यों में लगा व्यक्ति आत्मसाक्षात्कार के प्रति सोता रहता है।'

श्रीवास पण्डित के घर में कीर्तन: संकीर्तन आन्दोलन के प्रारम्भिक दिनों में भगवान् चैतन्य श्रीवास पण्डित के घर में रात्रि भर कीर्तन किया करते थे। भौतिकतावादी व्यक्तियों के लिये यह रात्रि का समय सोने के लिये था, परन्तु भक्तों के लिये आनन्द का समय था। संध्या के समय भक्तगण श्रीवास के घर में आ मिलते थे। उस समय मुकुन्द महाशय के सुन्दर कीर्तन को सुनकर भगवान् चैतन्य में भावावेश हो आता और वे नृत्य एवं उच्चस्वर में कीर्तन करने लगते। सारी रात एक मुहूर्त अर्थात् ४८ मिनट की तरह बीत जाती थी। प्रभातकाल में जैसे-तैसे प्रभु बाह्य दशा में आते थे। इस प्रकार श्रीशचीनन्दन रात भर निरन्तर कीर्तन करते थे। जहाँ एक ओर महाप्रभु के कीर्तन से भक्तों के दुःख नष्ट हो जाते, तो दूसरी ओर बार-बार 'हरि बोल, हरि बोल' पुकारने से पाखण्डियों की निद्रा भंग हो जाती। परिणामस्वरूप उन्हें क्रोध आ जाता और जिसके मन में जो आता वही बकने लगता था। कोई कहता था- 'क्या इन लोगों के शरीर की वायु बिगड़ गयी है?' कोई कहता था- 'क्या करें? इनके मारे रात में सो नहीं पाते हैं।' कोई कहता था-'इनके जोर से पुकारने से भगवान् नाराज हो जायेंगे। इस कर्म से इन लोगों का सर्वनाश हो जायेगा।' कोई कहता था- 'ज्ञान-योग का विचार छोड़कर, इन लोगों ने बिल्कुल उद्दण्ड चाल पकड़ ली है।' इस प्रकार हम देखते हैं कि इस श्लोक की शिक्षा भगवान् चैतन्य के संकीर्तन आन्दोलन के साथ अत्यन्त मेल खा रही है, कि भौतिकतावादियों के लिये जो रात्रि है उसमें संयमी व्यक्ति जागते हैं उसी प्रकार सामान्य व्यक्तियों के लिये जो रात्रि का समय सोने के लिये था, उस रात्रि में भगवान् चैतन्य तथा उनके भक्तगण संकीर्तन का आनन्द लेते थे।

खोलबेचा श्रीधर के द्वारा रात्रि में कीर्तन: श्रीचैतन्य महाप्रभु की लीलाओं में खोलबेचा श्रीधर का चरित्र भी अत्यन्त दिव्य है। श्रीकृष्ण का नाम लेते हुये इन्हें रात्रि के चार प्रहर नींद नहीं आती थी। वे सारी रात 'हरि हरि' की ऊँची टेर लगाते थे। पाखण्डी निन्दक लोग कहते थे कि 'श्रीधर की चिल्लाहट के मारे हम रात भर सो नहीं पाते हैं और हमारे दोनों कान फटे जाते हैं। गँवार उल्लू कहीं का, भात से पेट भरता नहीं- इसी से भूख से व्याकुल होकर वह रात भर जाग-जाग कर मरता है।' इस प्रकार पाखण्डी लोग गाली दे देकर जलते-मरते थे। परन्तु श्रीधर मस्त होकर रात्रि भर कीर्तन करते रहते थे।

भौतिकतावादियों का इन्द्रियतृप्ति का जीवन चाहे जितना भी अनेक प्रकार के रूप-रंगों से भरा हुआ हो, वह कृष्णभावनाभावित व्यक्ति के लिये तुच्छ प्रतीत होता है।

हरेकृष्ण भक्तों का निशान्तकालीन कार्यक्रम: यहाँ पर भगवान् कह रहे हैं कि भौतिकतावादियों के लिये जो निशा अर्थात् रात्रि है उसमें आत्मसंयमी पुरुष जागते हैं। यदि शास्त्रों की दृष्टि से देखा जाये तो निशाकाल रात्रि के १० बजकर ३४ मिनट से प्रारम्भ होता है तथा रात्रि के ३ बजकर २२ मिनट पर समाप्त होता है। इस प्रकार निशाकाल ४ घण्टे ४८ मिनट का होता है। निशाकाल के पश्चात् निशान्तकाल रात्रि के ३ बजकर २२ मिनट से प्रारम्भ होता है तथा प्रातः ५ बजकर ४६ मिनट पर समाप्त होता है। इस प्रकार निशान्तकाल २ घण्टे २४ मिनट का होता है। निशान्तकाल की इस अवधि में ४८-४८ मिनट के तीन मुहूर्त होते हैं जिनमें से बीच का मूहूर्त जो रात्रि के ४ बजकर १० मिनट से प्रारम्भ होकर ४ बजकर ५८ मिनट पर समाप्त होता है, ब्राह्ममुहूर्त कहलाता है। श्रील प्रभुपाद ने ४८ मिनट के इसी मूहूर्त के अन्दर ४ बजकर ३० मिनट से प्रारम्भ करके २० या २५ मिनट के लिये मंगल आरती का कार्यक्रम स्थापित किया है। उनका आदेश था कि हमें हरसम्भव परिस्थिति में मंगल आरती में भाग लेना चाहिए। मंगल आरती में भाग लेने के लिये हरे कृष्ण भक्तों को चार बजे या उससे भी पूर्व जागना होता है ताकि वे साढ़े चार बजे मंगल आरती प्रारम्भ होने के पूर्व स्नान करके, तिलक धारण करके और स्वच्छ वस्त्र धारण करके मन्दिर में आ सकें।

परन्तु ऐसा कई बार देखा जाता है कि भौतिकतावादी लोग जिस समय अर्थात् रात्रि के साढ़े तीन या चार बजे नाइट क्लबों में अपना समय गुजार कर सोने की तैयारी कर रहे होते हैं, उसी समय हरेकृष्ण भक्तगण अपनी शय्या त्याग कर जाग रहे होते हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि जिस समय भौतिकतावादियों की निशा प्रारम्भ होती है अर्थात् वे लोग सोने की तैयारी करते हैं, उस समय शास्त्रों के अनुसार तथा हरेकृष्ण भक्तों के अनुसार निशा का अन्त होता है अर्थात् हरे कृष्ण भक्तगण जागते हैं तथा मंगल आरती में भाग लेने की तैयारी करते हैं।

श्रील भक्तिविनोद ठाकुर द्वारा रात्रि जागरण: श्रील भक्तिविनोद ठाकुर का नियम था कि वे रात्रि में १० बजे से ४ बजे तक जागकर

पुस्तकें लिखते थे। जिला न्यायाधीश होने के कारण दिन में उनके कार्यालय तथा घर में बहुत से लोग उनसे मिलने आते थे, इस कारण वे अपने मन को पुस्तकें लिखने में केन्द्रित नहीं कर सकते थे। अतः पुस्तकें लिखने के लिए उन्होंने रात्रि का ऐसा समय चुना, जिस समय सभी लोग सोये हुये रहते हैं। ऐसे समय में न तो कोई बाहर का व्यक्ति उनसे मिलने आता था और न ही उनकी पत्नी या बच्चे ही उनके कार्य में बाधा पहुँचाते थे। यद्यपि उनके साथ उनकी पत्नी तथा १२ बच्चे थे, फिर भी इतने बड़े परिवार के साथ रहते हुये भी वे अत्यन्त संयमी थे। इस प्रकार हम देखते हैं कि इस श्लोक की शिक्षा श्रील भक्तिविनोद ठाकुर के जीवन के साथ अत्यन्त मेल खा रही है। जिस प्रकार इस श्लोक में भगवान् कह रहे हैं कि जिस रात्रि में सभी प्राणी सोते हैं, उसमें संयमी व्यक्ति जागता है, उसी प्रकार रात्रि के समय जब उनके परिवार में सभी लोग सोते थे, उस समय श्रील भक्तिविनोद ठाकुर पुस्तकें लिखते थे। उन्हीं की परिपाटी पर चलते हुए श्रील प्रभुपाद भी उस समय पुस्तकों का अनुवाद करते जब पूरा संसार सो रहा होता।

३) जिसमें समस्त प्राणी जागते हैं

श्लोक की दूसरी पंक्ति में भगवान् कहते हैं- *यस्यां जाग्रति भूतानि।* अर्थात् जिसमें समस्त प्राणी जागते हैं। तो भगवान् यहाँ पर यह कहना चाहते हैं कि इन्द्रियतृप्ति का जीवन सामान्य लोगों के लिये दिन के समान है जिसमें वे लोग जागते हैं। इस भौतिक संसार में भौतिकतावादी लोग इन्द्रियतृप्ति के लिये कठोर परिश्रम करते रहते हैं। वास्तव में इन्द्रियतृप्ति का यह जीवन रात्रि के समान है जिसमें भौतिकतावादी लोग इन्द्रियतृप्ति का स्वप्न देखते रहते हैं। स्वप्न में व्यक्ति जिन वस्तुओं को प्राप्त करने के लिये बहुत इच्छा करता है या जिन वस्तुओं को प्राप्त कर लेता है तथा अत्यन्त हर्ष मनाता है या जिन वस्तुओं को प्राप्त न करने के कारण अत्यन्त शोकग्रस्त होता है, वे वस्तुयें जागने पर रहती ही नहीं हैं। सब कुछ समाप्त हो जाता है। उसी प्रकार मृत्यु के साथ व्यक्ति का सब कुछ छिन जाता है, परन्तु फिर भी इस बात पर विचार न करके भौतिकतावादी व्यक्ति इन्द्रियतृप्ति के लिये धन का संग्रह करते रहते हैं। जब कोई व्यक्ति स्वप्न की स्थिति को अपनी जाग्रत अवस्था मान कर किसी वस्तु के लिये हर्ष और शोक मनाता रहता है, तो यह समझना चाहिये कि वह व्यक्ति बहुत बड़े धोखे में है। ऐसे लोग भोग की वस्तुओं का संग्रह करने में अत्यन्त सावधानी के साथ लगे रहते हैं। वे एक-एक पैसे का हिसाब रखते हैं। जमीन के एक-एक इंच का ख्याल रखते हैं। अधिक से अधिक धन पर अधिकार करने का प्रयास करते हैं। वे सोचते हैं कि मेरी इतनी पूंजी हो गयी है। मुझे इतना अधिक लाभ प्राप्त हुआ है। इस भौतिक संसार में आदर-सत्कार-मान-बड़ाई जो अनित्य हैं, उन्हीं में रचे-पचे रहते हैं।

४) वह आत्मनिरीक्षक मुनि के लिये रात्रि है

श्लोक के अन्तिम शब्द हैं- *सा निशा पश्यतो मुनेः।* अर्थात् वह आत्मनिरीक्षक मुनि के लिये रात्रि है। तो यहाँ पर श्रीभगवान् कह रहे हैं कि भौतिकतावादियों के लिये जो इन्द्रियतृप्ति का जीवन दिन के समान बहुत तड़क-भड़क तथा आमोद-प्रमोद से भरा हुआ है, वह कृष्णभावनाभावित व्यक्ति के लिये रात्रि के अन्धकार के समान है। भौतिकतावादियों का इन्द्रियतृप्ति का जीवन चाहे जितना भी अनेक प्रकार के रूप-रंगों से भरा हुआ हो, वह कृष्णभावनाभावित व्यक्ति के लिये तुच्छ प्रतीत होता है।

पश्यतो शब्द की व्याख्याः यहाँ पर कृष्णभावनाभावित व्यक्ति के लिये भगवान् ने पश्यतः शब्द का प्रयोग किया है। पश्यतः शब्द का अर्थ है- देखने वाला। परन्तु यहाँ पर प्रश्न है कि वह क्या देखने वाला है? हमें समझना चाहिए कि कृष्णभावनाभावित व्यक्ति वैकुण्ठ जगत् तथा इस भौतिक जगत् में दिन और रात का अन्तर देखता है। कृष्णभावनाभावित व्यक्ति इस भौतिक जगत् में अनेक प्रकार की सुख-सुविधाओं को जुटाने में अपना मूल्यवान् जीवन बर्बाद न करके वैकुण्ठ जगत् में जाने की तैयारी करता है। यह भौतिक जगत् रात्रि के समान है, जिसमें भौतिकतावादी लोग सो रहे हैं, परन्तु वे लोग इसे दिन समझते हैं क्योंकि वे इस रात्रि में इन्द्रियतृप्ति का स्वप्न देख रहे हैं। उन्हीं के बीच में कृष्णभावनाभावित व्यक्ति भी स्वप्न देख रहा है। परन्तु वह इस स्वप्न को स्वप्न के रूप में देख रहा है। जब व्यक्ति स्वप्न को स्वप्न समझ लेता है तो इसका अर्थ है कि वह व्यक्ति जाग रहा है। ऐसी स्थिति उस व्यक्ति की होती है जो स्वप्न की अवस्था से जाग्रत अवस्था में आ रहा है। उस समय वह व्यक्ति स्वप्न को स्वप्न समझकर उसे महत्व न देकर जागने की तैयारी करता है तथा सोचता है कि उसे दिन में क्या कार्य करना है। उसी प्रकार कृष्णभावनाभावित व्यक्ति इन्द्रियतृप्ति के जीवन को स्वप्न समझकर उसे महत्व न देकर वैकुण्ठ जगत् में जाने की तैयारी करता है।

इस श्लोक के बंगाली पद्यानुवाद में श्रील प्रभुपाद लिखते हैं-

विषयी विषये निष्ठा करे से प्रचुर।
सर्वदा जाग्रत सेई सर्वदा भरपुर।।
संयमीर सेई चेष्टा निशार समान ।
संयमी जाग्रत थाके आत्म विषयान।।
विषयीर सेई आत्मा रात्रिर समान।
उभयेर कार्य हय बहु व्यवधान।।

यहाँ श्रील प्रभुपाद विषयी तथा संयमी, इन दो प्रकार के व्यक्तियों की चर्चा कर रहे हैं तथा अन्त में कहते हैं कि दोनों व्यक्तियों के कार्यों में बहुत अन्तर है।

हरे कृष्ण!

(पत्रिका में सीमित स्थान होने के कारण यहाँ लेख का संक्षिप्तीकरण प्रकाशित किया गया है।)

भूल सुधार

पिछले अंक में पृष्ठ संख्या ३० के पहले कॉलम में कुछ शब्द बड़े अक्षरों में छप गए थे। पाठकों से निवेदन है कि वे उसे अनदेखा कर दें। - सम्पादक।

१ जनवरी तक संशोधित

अन्तर्राष्ट्रीय कृष्णभावनामृत संघ के केंद्रों की सूची

संस्थापकाचार्यः श्री श्रीमद् ए.सी.भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद

अगरतला, (०३८१) २२७०५३, premadata@rediffmail.com, **अहमदाबाद,** (०७९) २६८६-१९४५, १६४५, jasomatinandan.acbsp@pamho.net
अमृतसर, (०१८३) २५४०१७७, **इंदौर,** (०७३१) ४९७२६६५, इम्फाल, (०३८५) २२१५८७, **इलाहाबाद,** (०५३२) २४१६७१८, iskcon.allahabad@pamho.net, **उज्जैन,** (०७३४) २५३६०००, iskcon.ujjain@pamho.net, **उधमपुर,** (०१९९२)२७०२९८, २७६१४६, **कोलकाता,** (०३३)२२८७-३७५७, -६०७५, -८२४२, iskcon.calcutta@pamho.net, **कटरा,** (०१९९१) २३३०४७, **कुरुक्षेत्र,** (०१७४४) २३४८०६, **कोयंबटूर,** (०४२२) २६२-६५०९, -६५०८ iskcon.calcutta@pamho.net, गुंटूर, ५२२ ५०९, **गुवहाटी,** (०३६१) २५४५९६३, iskcon.guwahati@pamho.net, **चंडीगढ़,** (०१७२) २६०१५९०, २६०३२३२, bhaktivinode.gkg@pamho.net, **लुधियाना,** (१६१)३११८८९७, ९८१५९४०००५,२७७०६००, **जयपुर,**(०४१४)२७८२७६५, २७८१८६०, jaipur@pamho.net, **जम्मु,** (०१९९१) २५८२३०६, **तिरुपति,** (०८७७) २२३०११४, २२३०००९, guesthouse.tirupati@pamho.net, **त्रिवेंद्रम,** (०४७१) ३२८१९७, jsdasa@yahoo.co.in, द्वारका, (०२८९२) ३४६०६, **नई दिल्ली,** ईस्ट ऑफ कैलाश, (०११) २६२३५१३३,४,५,६,७, neel.sunder@pamho.net, **नई दिल्ली,** पंजाबी बाग, २५२२२८५१, २५२२७४७५, ५५१३६२००, **नोयडा,** (०९५१२०) २४५४९१२,२४५५०१५,vraja.bhakti.vilas.lok@pamho.net
नागपुर, ९३७१०६४१०२, ९४२३६३५३११, iskcon.nagpur@pamho.net, **नैल्लोर,** (०८६१)२३१४५७७, ९९८५०५८५५०, Sukadevaswami@gmail.com, **पटना,** (०६१२) २२२०७९४, २२०५९२९, krishna.kripa.jps@pamho.net, **पंढरपुर** (०२१८६) २६७२४१, २६७२४२, iskcon.pandharpur@pamho.net, **पुरी,** (०६७५२) २३१४४०, **पूना** (०२०) ४१०३३२२२, ४१०३३२२३, iyfpune@vsnl.com, **बड़ोदा,** (०२६५) २३१०६३०, २३३१०१२, basu.ghosh.acbsp@pamho.net, **बेर्हमपुर,** (०६८०)२३५०१००, ०९४३७१७९४००, panchratna.gkg@pamho.net, **बेलगाम,** (०८३१) २४३६२६७, २४००१०८, **बेंगलोर,**(०८०) ३४७१९५६, ard@iskconbangalore.org, **बेंगलोर,** (०८०) २३५६५७०८, vibhav.krishna.jps@pamho.net, **भुवनेश्वर,** (०६७४) २५५३५१७, २५३३४७५, २५५४२८३, iskconbhubaneswar@rediffmail.com, **हनुम्कोण्डा**, (०८७१२) ७७३९९, **हरिदासपुर,** (०१३३४) २६०८१८, ९४११३७१८७०, **हैदरबाद,** २४७४४९६९, २४६०७०८९, vedantacaitanya@pamho.net, **रायपुर,** (०७७१)५०३७५५५, iskconraipur@yahoo.com, **रनघाट,** प.बंगाल, दूरध्वनिः (०३४७३)२८११५०, २८१२२६, shyamrup.jps@pamho.net, **मदुरई,** (०४५२) २७४६४७२, **चेन्नई,**(०४४) २५०१९३०३, २५०१९१४७ (०४४) २४५३०९२१/२३, ३२९११४७२, iskconchennai@rediffmail.com, **मायापुर,** (०३४७२) २४५२३९, २४५२४०, २४५२३३, mayapur.chandrodaya@pamho.net, **मुंबई,** मीरा रोड, (०२२) २८११७७९५, २८११७७९६, jagjivan.gkd@pamho.net, **मुंबई,** जुहू (०२२) २६२० ६८६०, iskcon.juhu@pamho.net, **मुंबई,** चौपाटी (०२२) २३६९७२२८, radha-krishna.rns@pamho.net, **मोइरंग,** ७९५१३३, **लखनऊ,** (०५२२) २२३५५६, २७१५५१, **कानपुर,**०९३०७१८८११७, kanpur@pamho.net, **वृंदावन,** (०५६५) २५४००२१, vrindavan@pamho.net; **वल्लभ विद्यानगर,** (०२६९२)२३०७९६, २३३०१२, **विजयवाडा,** (०८६४५)२७२५१३,**वारंगल,**(०८७१२) ४२६१८२, **सिकंदराबाद,** (०४०) ७८०५२३२, **सिल्चर,** (०३८४२) ३४६१५, **सिलीगुडी,** (०३५३) ४२६६१९, ५३९०४६, **सोलापुर,** ०९३७११७८३९३, **सूरत,** (०२६१) ७६५८९१, ७६५५१६, ७७३३८६, surat@pamho.net, **सेलम,** (०४२७) २४१८२४५, ०९४४२१५३४७२, iskcon.salem@pamho.net, **श्रीरंगम्,** ६२०००६/ (०४३१) ४३३९४५, **वाराणसी,** (०५४२) २७६४२२, २२२६१७, **विशाखापट्टनम्,** (०८९१) २५२८३७६, samba.jps@pamho.net, **झाँसी,** (०५१७) २४४३६०२, **राजमुन्दरी,** (०८८३) २४४२२८८, २४४२२७७, **अमरावती,** (०७२१)२६६६८४९, ०९४२३१२७८४,iskconamravati@gmail.com, **अरावडे,** (०२३४६)२५५७६६, २५५५१५, ०९३७११६३९५५, iskcon.aravade@pamho.net, **बीड़,** (०२४४२)२३१७९९, २३३०५४, ०९३२५१६४७१३, iskcon.beed@pamho.net, **चार्मोशी,** ०९४२३४२२९१४, **पंढरपुर,** (०२१८६)२६७२४२, ६६, ०९४२३३३५९९१, iskcon.pandharpur@pamho.net, **नासिक,** (०२५३) ६४५०००५, ९८५००७१२२७, siksastakam.rns@pamho.net, **तिरुनेवेल्ली,** (०४६२) २५०१६४०, **गाजियाबाद,** (०१२०)२८२४२००, ९३१२४३८०००, **नोयडा,** (०१२०) २५०६२११, २५०६२६२, vraja.bhakti.vilas.lok@pamho.net, **वृन्दाकुण्ड,** वृन्दावन, **जगन्नाथ मंदिर, सीम्न्त द्वीप,** मायापुर

(भारत एवं विदेश में स्थित सभी केन्द्रों की पतों सहित पूर्ण सूची के लिए btghindi@pamho.net पर लिखें स्थित)

बँटवारा

एक समय हम सभी भगवान् के साथ अपने सच्चे घर में रहा करते थे। किन्तु हमने उनसे अलग होने का विचार किया। क्यों हम किसी पर निर्भर रहें? बाईबल के अनुसार सृष्टि के आरम्भ में भगवान् ने आदम और हव्वा की उत्पत्ति की। उन्हें रहने के लिए पूरी दुनिया देते हुए भगवान् ने कहा कि तुम सुखपूर्वक यहाँ रहो, बस एक बात का ध्यान रखना – ''इस एक वृक्ष के फल मत खाना।''

उनका जीवन आराम से गुजरने लगा। अचानक एक दिन शैतान ने हव्वा के कान भर दिये – ''भगवान् ने तुम्हें इस वृक्ष के फल खाने के लिए इसलिए मना किया है क्योंकि इसे खाने से तुम भी भगवान् के समान बन सकती हो। और भगवान् ऐसा नहीं चाहते।''

हव्वा के मन में संदेह बैठ गया। ''शायद भगवान् से अलग रहकर हम अच्छी तरह भोग कर पायेंगे।'' उसने हाथ बढ़ाकर फल तोड़ा और खा लिया। यद्यपि अबतक आदम और हव्वा निर्वस्त्र रहते थे किन्तु शुद्ध चेतना होने के कारण वे इन विचारों से मुक्त थे। चेतना के विकृत होते ही पहली बार उन्हें इसका भान हुआ। स्त्री–पुरुष का भेद दिखने लगा और भगवान् से अलग रहकर भोग करने की इच्छा से वे शारीरिक चेतना में आ गिरे।

वैदिक शास्त्र भी इसी मत को प्रस्तुत करते हैं। भगवद्गीता (७.२७) में भगवान् श्रीकृष्ण कहते हैं, *इच्छा द्वेष...* ''भगवान् के ऐश्वर्य से द्वेष एवं उनसे अलग रहकर भोग करने की इच्छा से हम इस संसार में आये हैं।''

मन हमें विश्वस्त कर देता है कि हम अपनी वर्तमान परिस्थिति को परिवर्तित करने पर ही सुखी हो सकते हैं। चूँकि अलगाव की चेतना ही इस संसार में हमारे पतन का प्रमुख कारण थी, समय–समय पर वह हमारे सम्बन्धों, विचारों एवं कार्यों में प्रदर्शित होती रहती है। छोटी–छोटी बात पर पति–पत्नी, पिता–पुत्र, मित्रों, व्यापारी साझेदारों, जातियों, धर्मों, राष्ट्रों, या एक राष्ट्र के भीतर राज्यों में अलगाव सामान्य बात है।

कुछ शताब्दियों पूर्व सम्पूर्ण पृथ्वी भारतवर्ष थी। टुकड़े होते–होते भारत की सीमायें सिकुड़ती गई। हालांकि वर्तमान में बाहर से कोई खतरा दिखाई नहीं देता सीमाओं के अन्दर बँटवारा नहीं रुका है। उ.प्र. से उत्तरांचल निकला, बिहार से झारखण्ड और मध्यप्रदेश से छत्तीसगढ़ निकला। सिलसिला अभी भी जारी है। किन्तु ''स्वतन्त्र'' हुए इन राज्य के लोगों से पूछिये, ''क्या आप पहले से अधिक सुखी हैं? क्या आप बूढ़े नहीं होंगे? क्या आप मरेंगे नहीं? क्या आप अत्यधिक सर्दी, गर्मी या वर्षा से प्रभावित नहीं होंगे?''

स्वतन्त्रता की तड़प आत्मा की तड़प है। आत्मा इस भौतिक संसार के बन्धनों से मुक्त होकर पुनः अपने सच्चे घर लौटने के लिए लालायित है, किन्तु स्वयं को शरीर मान बैठने के कारण हम शरीर से सम्बन्धित विभिन्न मुक्तियों में सुख की खोज करते हैं। परिणाम है अनेक प्रकार के 'मुक्ति आन्दोलनों' की प्रचुरता – स्त्री मुक्ति, दलित मुक्ति, मानव अधिकार इत्यादि। प्रत्येक व्यक्ति अथवा समुदाय अपनी एक विशिष्ट पहचान स्थापित करना चाहता है। इस प्रकार की स्वतन्त्रता सुख देती है, किन्तु क्षणिक तथा अत्यन्त अल्प। कुछ समय के लिए मन उत्तेजित रहता है कि 'हम स्वतन्त्र हो गये' किन्तु आत्मा ऐसी स्वतन्त्रता के लिए उत्कण्ठित है जिसका अनुभव कर हमारा सुख निरन्तर बढ़ता रहता है।

इस संसार में हम कितने भी बदलाव करके अपनी स्थिति को सुधारने का प्रयास क्यों न करें अन्ततः हमें सबकुछ यहीं छोड़कर जाना होगा। कहाँ है स्वयं को विश्वशक्ति कहने वाले सिकंदर, नेपोलियन अथवा हिटलर, जिन्होंने अनेक राष्ट्रों की सीमाओं में जोड़–तोड़ किया? कहाँ हैं श्रीमान् जिह्वा और महात्मा गाँधी? कालचक्र प्रत्येक व्यक्ति एवं वस्तु को इतिहास बनाता जा रहा है। फिर क्यों न किसी ऐसी वस्तु के लिए प्रयास किया जाये जिसे जन्म–जन्मान्तर तक हम अपने साथ रख सकते हैं?

जिस अखण्ड भारत का सपना हमारे नेताओं ने देखा था वह खण्ड–खण्ड होता जा रहा है। क्या गारंटी है कि अगले कुछ दशकों में उत्तराखण्ड, झारखण्ड अथवा छत्तीसगढ़ (शायद तैलंगना) में से कोई नया राज्य नहीं निकलेगा?

भगवान् से अलग होकर हमने बँटवारे रूपी धरती पर अपने भौतिक जीवन का वृक्ष लगाया है। यदि भगवान् से पुनः जुड़कर हम उस वृक्ष की जड़ें नहीं काटेंगे तो यदा–कदा उसमें अलग–अलग (दुः)गन्ध वाले फूल और (बे)स्वाद फल आते रहेंगे।

आइये, बँटवारों की इस दुनिया को 'तलाक' देकर हम अपने सच्चे घर जायें जहाँ केवल प्रेम है, जहाँ बँटवारे की आवश्यकता नहीं है। क्योंकि वह एक ऐसा घर है जिसमें सम्पूर्ण जगत् निवास कर सकता है।

–वंशी विहारी दास